

https://frontdesk.co.in/jainism/jain-dharm-aur-darshan/

#### **FAIR USE DECLARATION**

This book is sourced from an online repository and is presented here as part of the **Front Desk Jainism Forum (FDJF)** collection. It is shared under commonly accepted Fair Use guidelines, intended for individual educational or research purposes.

To the best of our knowledge, this book resides in the public domain, and we believe the original repository intended for its public dissemination. We wholeheartedly applaud and support their efforts, and our intent in providing this version is solely to make the book accessible to a broader audience. The **FDJF** group values the importance of cataloging in making valuable works discoverable and strives to support these efforts through our initiatives.

In some cases, original sources may no longer be accessible, are difficult to locate, or are provided in Indian languages instead of English, limiting their reach. The **FDJF** aims to address these challenges by expanding access while supporting repositories and digitization projects. Our intent is to complement—not undermine—these efforts.

For more information about our mission and fair use guidelines, please visit our website. While we make these works available with the understanding that they are in the public domain within our jurisdiction, we advise users to confirm their legal rights to access and use this material in their own jurisdiction before downloading.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection and have concerns about its presentation or availability, please email us. We are committed to addressing any objections promptly and respectfully. This notice serves both to inform readers and to clarify our intent and responsibility regarding these works.

The FDJF team

## राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक - पद्मश्री जिनविजय मुनि, पुरातत्त्वाचार्य

[ सम्मान्य सश्चालक, राजस्थान प्राच्यिवद्या प्रतिष्ठान, जोथपुर ]

यन्धाङ ७३

बखतराम साह कृत

बुद्धि-विलास

प्रकाशक

राजस्थाम राज्य संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर ( राजस्थान ) RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR

## राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

ग्रामान्यतः, श्रिष्वल भारतीय तथा विशेषत राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन सस्कृत, प्राकृत, श्रपभ्रश, राजस्थानी, हिन्दी श्रादि भाषानिबद्ध विविध वाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावलि

प्रथान सम्पादक पद्मश्री जिनविजय पुनि, पुरातस्वाचार्य सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर; श्राँनरेरि मेम्बर श्राँफ जर्मन श्रोरिएण्टल सोसाइटी, जर्मनी, निवृत्त सम्मान्य नियामक (श्राँनरेरि डायरेक्टर), भारतीय विद्याभवन, वम्बई, प्रधान सम्पादक, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, इत्यादि।

> ग्रन्थांक ७३ बखतराम साह कृत बुद्धि-विलास

प्रकाशक राजस्थान राज्यातानुसार सन्नातक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोघपुर (राजस्थान)

# बुद्धि-विलास

सम्पादक

श्री पद्मधर पाठक, एम०ए०

शोब-सहायक (प्रवर)

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोघपुर

#### प्रकाशनकत्ती

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

## सन्नालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाव्द २०२० } भारतराष्ट्रीय शकाव्द १८६४ प्रथमावृत्ति १००० } भारतराष्ट्रीय शकाव्द १८६४ मूल्य : ३.७५ न०पै०

## CONTENTS OF THE TEXT

स्वर्ग नाम नरक प्रभा नाम नरक नाम नरक प्रभा नाम नरक नाम नरक प्रभा नाम नरक प्रभा नाम नरक प्रभा नाम नरक नाम नरक प्रभा नाम नरक	मगलाचरण	१- २	षडेलवाल उतपति वर्नन	43-02
नरक प्रभा नाम २ - ७  नृप वचा वर्नन ७ - १४  नगर उतपित वरनन १४ - ३१  भाषा ग्रन्थ की ३१ - ३३  सघादि उतपित ३३ - ३४  ग्राचारिज ग्रादि गृहस्थाचार- यति-वर्नन ३४ - ३४  मुनि, श्रावक को उपदेस वर्नन १४ - ४१  मुनि, श्रावक वर्नन १४ - ४१  मुनि, वर्नन १४ - १४  मुन, श्रावक वर्नन १४ - ४१  मुनि, वर्नन १४ - १४  मुनि, वर्नन १४  मुनि, वर्नन १४  मुनि, वर्नन १४ -	-	२	क्रिया वर्गीने किया वर्गीन	k3—k3
नगर उत्तपित वरनन १४—३१ भाषा ग्रन्थ की ३१—३३ सघादि जतपित ३३—३४ स्राचि जतपित ३३—३४ स्राचि जतपित ३३—३४ स्राचि जतपित ३३—३४ स्राचि ग्रहस्थाचार- यति-वर्नन ३४—३४ सुनि, श्रावक की जपदेस वर्नन १४—४१ सुनि, श्रावक की जपदेस वर्नन १४—४१ विसघ जतपित वर्नन ४७ सघ नाम वर्नन ४७ सघ नाम वर्नन ४७ सोलह स्वपन वर्नन ४६—५६ जपकर्ण नाम ५६—५७ चौरासी बोल छंद छप ५७—६८ द्रावड सघ जतपित वर्नन ६८ काष्टा सघ जतपित वर्नन ६८—६० निपिङ्छ सघ जतपित वर्नन ५८—६० पिराटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६२ स्रावक जतपित वर्नन ६२—६० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६२ स्रावक जतपित वर्नन ६२—६५ स्रावक जतपित वर्नन ६२—६५ स्रावक जतपित वर्नन ६२—६५ स्रावक जतपित वर्नन ६२—६० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६२ स्रावक जतपित वर्नन ६२—६५	•	२- ७	1	Ex-404
नगर उतपित वरनन १४—३१ भाषा ग्रन्थ की ११—३३ सघादि उतपित ३३—३४ प्राचारिज ग्रादि गृहस्थाचार- यति-वर्नन ३४—३५ मुनि, श्रावक की उपदेस वर्नन १४—४१ मुनि, श्रावक की उपदेस वर्नन १४—४१ विसघ उतपित वर्नन ४७ सघ नाम वर्नन ४७ सघ नाम वर्नन ४७ सघ नाम वर्नन ४७ सोलह स्वपन वर्नन ४७ सोलह स्वपन वर्नन ४७ चौरासी वोल छंद छप ५७—६८ द्रावड सघ उतपित वर्नन ६६ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६ काष्टा सघ उतपित वर्नन ५६—६० निपिष्ट्र सघ उतपित वर्नन ५६—६० पिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६२ पट्टावली वर्नन ६२—६० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६२ पट्टावली वर्नन ६२—६५ स्रावक उतपित वर्नन ६२—६० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६२ पट्टावली वर्नन ६२—६५ स्रावक उतपित वर्नन ६२—६५ पट्टावली वर्नन ६२—६५ स्रावक उतपित वर्नन ६२—६५ पट्टावली वर्नन ६२—६५ स्रावक उतपित वर्नन ६२ स्रावक उतपित वर्नन १२८—१३२ स्रावक उतपित वर्नन ६२—६५ स्रावक उतपित वर्नन १२२ स्रावक उतपित वर्नन १२२० स्रावक उतपित वर्नन १	नृप वश वर्नन	6-88	रजस्वला वर्नन	
सघादि उतपति ३३—३४  प्राचारिज ग्रादि गृहस्थाचार- यति-वर्नन ३४—३४  मुनि, श्रावक को उपदेस वर्नन १४—४१  मुनि शास्त्र करता नाम वर्नन १४—४१  विसघ उतपति वर्नन ४७  सघ नाम वर्नन ४७  सघ नाम वर्नन ४७  सघ नाम वर्नन ४७  सोलह स्वपन वर्नन ४७  सोलह स्वपन वर्नन ४७  सोलह स्वपन वर्नन ४५—५६  उपकर्ण नाम ५६—५६  ज्यापनीय संघ उतपति वर्नन ६६  काष्टा सघ उतपति वर्नन ६६  परिगृह वर्नन ११४—१२४  तोथंकर पिता माता चिन्ह जनम नगरी वर्नन १२४—१२६  सप्त प्रकार माला जिपवा १२६—१२७  भिन भिन वेद निरनय कथन १२६—१२७  भिन भिन वेद निरनय कथन १२६—१३१  ग्रहादिक पूजन १३१  ग्रहादिक पूजन १३१  ग्रहादिक पूजन १३१  ग्रहादिक पूजन १३१  ग्रहाविक पूजन १३१  ग्रहाविक नम १३२  ग्रहावली वर्नन ६१—६५  पर्हावली वर्नन ६१—६५  पर्हावली वर्नन ६१—६५  श्रावक उतपति वर्नन ६१—६५  श्रावक वर्नत नम १३२  श्रावक वर्नत ११४	नगर उतपति वरनन	१४३१		
स्राचरिज ग्रादि गृहस्थाचार- यति-वर्नन ३४—३४  मुनि, श्रावक की उपदेस वर्नन १४—४१  मुनि, श्रावक को उपदेस वर्नन १४०—१२६  मुनि शास वर्नन १४—४१  स्रावस वर्नन ११४  मुनि, श्रावक को उपदेस वर्नन ११४  मुनि शास वर्नन ११४  मुनि शास वर्नन ११४  मुनि, श्रावक को उपदेस वर्नन ११४  मुनि वर्नन ११४  मुनि, श्रावक को उपदेस वर्नन ११४  मुनि, श्रावक वर्नन ११४  मुनि, श्रावक वर्नन ११४  मुनि, श्रावक वर्नन ११४  मुनि, श्रावक वर्नन ११४  मुनिक वर्नन ११४  मुनि, श्रावक वर्नन ११४  मुनिक वर्नन	भाषा ग्रन्थ की	र्वश—चेत्र	मौनि वर्नन	
यति-वर्नन ३४—३४  मुनि, श्रावक की उपदेस वर्नन १४—४१  मुनि शास्त्र करता नाम वर्नन ३५—४१  मुनि शास्त्र करता नाम वर्नन ३५—४१  वसघ उतपित वर्नन ४७  सघ नाम वर्नन ४७  सोलह स्वपन वर्नन ४७  सोलह स्वपन वर्नन ४७  सोलह स्वपन वर्नन ४५—५६  उपकर्ण नाम ५६—५७  चौरासी वोल छंद छप ५७—६६  द्रावड सघ उतपित वर्नन ६६  काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६  काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६  निपछछ सघ उतपित वर्नन ६६  मडलाचार्य उतपित वर्नन ७०—७१  कुदकुंदाचार्य वर्नन ७६—६०  परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६०  परिपाटो मट्टारकानि की वर्नन ६०—६०  परिपाटो वर्नन ६६—६०  परिपाटो वर्नन ६६—६०  परिपाटो वर्नन ६६—६०  परिपाटो वर्नन ५६—६०  परिपाटो वर्नन ६६—६०  परिपाटो क्रिंग ११४  सा वर्नन ११४  सा वर्नन ११४  सा वर्नन ११४  सा प्रकार माला जिवा १२६  च्यार गित लिखिए। वर्नन १२६  च्यार गित वर्नन १२६	सघादि 'उतपति	३३३४	सूवा सूतिग वर्नन	१०५
मुनि, श्रावक को उपदेस वर्नन १४—४१  मुनि शास्त्र करता नाम वर्नन ३५—४१ विसघ उतपित वर्नन ४७  सघ नाम वर्नन ४७  सघ नाम वर्नन ४७  सहवाहु चरित्र ४७  सोलह स्वपन वर्नन ४८—५६  उपकर्ण नाम ५६—५७ चौरासी वोल छंद छपे ५७—६८  द्रावड सघ उतपित वर्नन ६८ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६८ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६८ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६८—६० निपञ्च सघ उतपित वर्नन ६८—६० निपञ्च सघ उतपित वर्नन ७१—७१ कुदकुंदाचार्य वर्नन ७१—७१ मडलाचार्य उतपित वर्नन ७६—६० परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ६०—६२ पट्टावली वर्नन ६२—६२ श्रावक उतपित वर्नन ५१—६२ सा प्रकार माला जिपवा १२६—१३६ च्यार गित लिखिएा वर्नन १२६—१३६ प्रची नाम १३१ कुलकर नाम १३२ सावक उतपित वर्नन ६२—६२ पट्टावली वर्नन ६२—६२ श्रावक उतपित वर्नन ६२—६२ पट्टावली वर्नन ६२—६२ श्रावक उतपित वर्नन ६२—६२ सावक उतपित वर्नन ६२—६२	श्राचारिज ग्रादि गृहस्थाचार-	-	•1	१०५
मृति शास्त्र करता नाम वर्नन ३५-४१ विसघ उतपित वर्नन ४७ सघ नाम वर्नन ४७ भद्रवाहु चरित्र ४७ सोलह स्वपन वर्नन ४५-५६ उपकर्ण नाम ५६-५७ चौरासी बोल छंद छपै ५७-६६ द्रावड सघ उतपित वर्नन ६६ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६-६० निपिछ्छ सघ उतपित वर्नन ६०-७१ कुदकुंदाचार्य वर्नन ७१-७६ मडलावार्य उतपित वर्नन ७६-५० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०-६२ पट्टावली वर्नन ६१-६५ श्रावक उतपित वर्नन ५१-५५ सक्तांत नाम १३१ श्रावक उतपित वर्नन ६१-६० परिपाटो क्रिंग वर्नन ५१-६० परिपाटो क्रिंग वर्नन ६१-६० व्रावक्त वर्नन ११-६० क्रिंग वर्नन ११-६० क्रिंग वर्नन ११-१२। क्रिंग वर्नन ११-१४।	यति-वर्नेन 🖰 🖰	३४३४	श्रावग धर्म वर्नन	898 <del></del> 308
विसघ उतपित वर्नन ४७ प्रिगृह वर्नन ११४ सघ नाम वर्नन ४७ परिगृह वर्नन ११४ सम नाम वर्नन ४७ सोलह स्वपन वर्नन ४७ सोलह स्वपन वर्नन ४८—५६ उपकर्ण नाम ५६—५७ चौरासी बोल छंद छप ५७—६८ द्वावड सघ उतपित वर्नन ६६ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६—६० निपछ्छ सघ उतपित वर्नन ७०—७१ कुदकुंदाचार्य वर्नन ७१—७६ मडलाचार्य उतपित वर्नन ७६—६० परिगाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६० परिगाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६० पट्टावली वर्नन ६२—६२ समझ्वित नाम १३१ सम्बन्ध वर्तन ६२ समझ्वित नाम १३२ सम्बन्ध उतपित वर्नन ६२—६२ समझ्वित नाम १३२ सम्बन्ध वर्तन १३२ वर्लभद्र के नाम १३२ वर्लभद्र के नाम १३२	मुनि, श्रावक कौ उपदेस वर्नन	<i>\$8</i> − <i>88</i>	तियनु कौं उपदेस वर्नन	868 -31
सघ नाम वर्नन ४७  भद्रवाहु चरित्र ४७  सोलह स्वपन वर्नन ४८—५६ उपकर्ण नाम ५६—५७ चौरासी वोल छंद छपे ५७—६८ द्रावड सघ उतपित वर्नन ६८ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६ निपछ्छ सघ उतपित वर्नन ७०—७१ कुदक्तुंदाचार्य वर्नन ७६—८० परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ८०—८१ पट्टावली वर्नन ६१—८५ भावक उतपित वर्नन ६१—८५ भावक उतपित वर्नन ५६—८० परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ८०—८१ भावक उतपित वर्नन ५१—८५	मुति शास्त्र करता नाम वर्नन	३५४१	श्रसत्ति <b>वर्नन</b>	११४ ,
भद्रवाहु चरित्र सोलह स्वपन वर्नन उपकर्णा नाम प्रह—प्र७ चौरासी बोल छंद छपै प्र७—६= द्रावड सघ उतपित वर्नन वर्ग सह उतपित वर्नन हह काष्टा सघ उतपित वर्नन कित्र हह काष्टा सघ उतपित वर्नन प्रह—६० निपिछ्छ सघ उतपित वर्नन प्रह—६० निपिछ्छ सघ उतपित वर्नन ७१—७१ कुदक्तुंदाचार्य वर्नन ७१—७१ प्रहावली वर्नन पर्रम्हादक पूजन पर्रम्हादक प्रमुख	विसघ उतपति वर्नन '	86	ग्रचोर्य वृत वर्नन	११४
सोलह स्वपन वर्नन ४८—५६ तीर्थंकर पिता माता चिन्ह जनम नगरी वर्नन १२४—१२६ चौरासी वोल छंद छपे ५७—६८ द्रावड सघ उतपित वर्नन ६८ वेद निरनय कथन १२६—१२७ जिपछ सघ उतपित वर्नन ६८—६० निपछ सघ उतपित वर्नन ७०—७१ कुदकुंदाचार्य वर्नन ७१—७६ मडलाचार्य उतपित वर्नन ७६—८० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ६०—६१ पट्टावली वर्नन ६१—८५ श्रावक उतपित वर्नन ५१—६५ श्रावक उतपित वर्नन ५१—६५ श्रावक उतपित वर्नन ५१—६५ श्रावक उतपित वर्नन ५१—६५ विलभद्र के नाम १३२ विलभद्र के नाम १३२	सघ नाम वर्नन	४७	परिगृह वीर्नेन	११५
जनम नगरी वर्नन १२४—१२६ सप्त प्रकार माला जिपवा १२६ विद निरनय कथन १२६—१२७ विद निरनय कथन १२६—१२७ विद निरनय कथन १२६—१२७ विद निरनय कथन १२६—१२७ काष्ट्रा सघ उतपित वर्नन ६६ विद निरनय कथन १२६—१३६ काष्ट्रा सघ उतपित वर्नन ६६—६० निपिछ्छ सघ उतपित वर्नन ७०—७१ मुहादिक पूजन १३१ मुहादिक पूजन १३१ मुहादिक पूजन १३१ मुहादिक पूजन १३१ मुहात्वनी वर्नन ७६—६० परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ६०—६१ मुहादिन नाम १३२ मुहादिन नाम	भद्रवाहु चरित्र	४७	सप्त विसनं वर्नन	११५ं—१२४
चौरासी बोल छंद छपे ५७—६८ सप्त प्रकार माला जिपवा १२६ विद निरनय कथन १२६—१२७ ज्यापनीय संघ उतपित वर्नन ६६ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६—६० निपिछ्छ सघ उतपित वर्नन ७०—७१ मडलाचार्य वर्नन ७१—७६ मडलाचार्य उतपित वर्नन ७६—८० परिपाटो भट्टारकानि की वर्नन ८०—८१ पट्टावली वर्नन ६१—८५ श्रावक उतपित वर्नन ६५—८५ विलभद्र के नाम १३२	सोलहः स्वपन वर्नन	४८—५६	तीर्थंकर पिता माता चिन्ह	* * ·
द्रावड सघ उतपित वर्नन ६६  जयापनीय संघ उतपित वर्नन ६६  काष्ट्रा सघ उतपित वर्नन ६६—६०  निपिछ्छ सघ उतपित वर्नन ७०—७१  कुदकुंदाचार्य वर्नन ७१—७६  परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ६०—६१  श्वावक उतपित वर्नन ५१—६१  पट्टावली वर्नन ५१—६१  श्वावक उतपित वर्नन ५१—६१  विद निरनय कथन १२६—१२७  भिन भिन वेद निरनय कथन १२७—१२६  च्यार गित लिछिए। वर्नन १२६—१३१  ग्रहादिक पूजन १३१  प्रथ्वी नाम १३१  कुलकर नाम १३२  पट्टावली वर्नन ६१—६५  श्वावक उतपित वर्नन ६१—६५  श्वावक उतपित वर्नन ६१—६५  श्वावक उतपित वर्नन ६१—६५  श्वावक उतपित वर्नन ६८—६०  वेद निरनय कथन १२६—१२७  भिन भिन वेद निरनय कथन १२९—१३६  च्यार गित लिछिए। वर्नन १२६—१३१  ग्रहादिक पूजन १३१  प्रथ्वी नाम १३२  कामदेव नाम १३२  विलभद्र के नाम १३२	उपकर्ण नाम	५६—५७	जनम नगरी वर्नन	१२४१२६
ज्यापनीय संघ उतपित वर्नन ६६ भिन भिन वेद निरनय १२७—१२६ काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६—६० निपछ्छ सघ उतपित वर्नन ७०—७१ महलाचार्य वर्नन ७१—७६ महलाचार्य उतपित वर्नन ७६—६० परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ६०—६१ पट्टावली वर्नन ६१—६५ श्रावक उतपित वर्नन ६५—६५ श्रावक उतपित वर्नन ६५—६५ श्रावक उतपित वर्नन ६५—६६ श्रावक उतपित वर्नन ६५ श्रावक उतपित वर्नन ६५—६६ श्रावक उतपित वर्नन ६६ श्रावक उतपित वर्नन ६५ श्रावक उतपित वर्नन ६६ श्रावक उत्पादक वर्नित वर्नन ६६ श्रावक उतपित वर्नन ६६ श्रावक उत्पादक वर्नन ६६ श्रावक वरपित वर्नन ६६ श्रावक उत्पादक वर्नन ६६ श्रावक वर्नन ६६ श्रावक वर्नन ६६ श्रावक उतपित वर्नन ६६ श्रावक वर्नन ६६ श्राव	चौरासी वोल छंद छपै	५७६=	सप्त प्रकार माला जिपवा	१२६
काष्टा सघ उतपित वर्नन ६६—६० निपछ्छ सघ उतपित वर्नन ७०—७१ महलाचार्य वर्नन ७१—७६ महलाचार्य उतपित वर्नन ७६—६० परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ६०—६१ पट्टावली वर्नन ६१—६५ श्रावक उतपित वर्नन ६५—६५ श्रावक उतपित वर्नन ६५—६६ श्रावक व्रावक रूप वर्णिय के नाम १२२	द्रावड सघ उतपति वर्नन	६८	वेद निरनय कथन	१२६—१२७
निपिछ्छ सघ उतपित वर्नन ७०—७१ ग्रहादिक पूजन १३१ कुदकुंदाचार्य वर्नन ७१—७६ प्रथ्वी नाम १३१ मडलाचार्य उतपित वर्नन ७६—६० पुरुष्ती नाम १३१ पहावली वर्नन ५१—६१ कामदेव नाम १३२ श्रावक उतपित वर्नन ६१—६५ विलभद्र के नाम १३२	ज्यापनीय संघ उतपति वर्नन	६९	भिन भिन वेद निरनय	१२७—१२६
कुदकंदाचार्य वर्नन ७१-७६ प्रथ्वी नाम १३१ मडलाचार्य उतपति वर्नन ७६-८० कुलकर नाम १३१ परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ८०-८१ कामदेव नाम १३२ पट्टावली वर्नन ६१-८५ चक्रवित नाम १३२ श्रावक उतपति वर्नन ८५-८६ विलभद्र के नाम १२		<i>६६६०</i>	च्यार गति लिछिए। वर्नन	१२६१३१
मडलाचार्य उतपति वर्नन ७६—६० कुलकर नाम १३१ परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ६०—६१ कामदेव नाम १३२ पट्टावली वर्नन ६१—६५ चक्रवित नाम १३२ श्रावक उतपति वर्नन ६५—६६ विलभद्र के नाम १२	निपिछ्छ सघ उतपति वर्नन	90-00	ग्रहादिक पूजन	<b>१३</b> १
परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ८०—८१ कामदेव नाम १३२ पट्टावली वर्नन ६१—८५ चक्रवित नाम १३२ श्रावक उतपति वर्नन ८५—८६ विलभद्र के नाम १२				१३ <b>१</b>
परिपाटी भट्टारकानि की वर्नन ८०—८१ कामदेव नाम १३२ पट्टावली वर्नन ६१—८५ चक्रवित नाम १३२ श्रावक उतपति वर्नन ८५—८६ विलभद्र के नाम १२	मडलाचार्य उतपति वर्नन	96-50	कुलकर नाम	१३१
पट्टावली वर्नेन ६१—६५ चक्रवर्ति नाम १३२ श्रावक उतपति वर्नेन ६५—६६ वलिभद्र के नाम १२				
श्रावक उतपति वर्नन	_		l .	
कार अर्थन	श्रावक उतपति वर्नन	•		
	षाप वर्नन	<b>८६—८७</b>	नारायण नाम	•

### Front Desk Jainism Forum (FDJF)

प्रति-नारायगा नांग	१३३	श्राचार्य गुन वनंन	१४०—१४१
गव नारद-नाम	१३३	उपाध्याय गुन वर्नन	686—18a
ग्यारह रुद्र-नाग	१३३	साघु गुन वर्नन	१४५ — १४६
सोलह सती-नाम	१३३१३४	श्रुत भेद ग्यान द्वादसाग	
तीर्थंकर मुक्ति श्रासन वर्नन	१३४	वानी वर्नन	१४६—१४७
तीर्थंकर कवारे गए तिन	के	सूत्र वर्नेन	१४७
नाम	१३४	प्रथमान जोग वर्नन	१४७—१५१
श्रावक के सप्तदश नित्ति-ने	<b>म</b>	श्रावग किया वर्नन	१५१
वर्नेन	१३४—१३४	चौदह विद्या व रतन नाम	
म्यांन सूर्योदय नाटिकेन		वर्नन	१५१
म्यांन सूर्योदय नाटिकेन , स्रोक	<i>१३५—१३६</i>	वर्नन कलिकाल दोप उपद्रव वर्नन	•
	१३४—१३६ १३६		•
श्लोक		कलिकाल दोप उपद्रव वर्नन	•
स्रोक ग्रागम कौ वर्नन जीवं उतपति वर्नेन	१३६	कितकाल दोप उपद्रव वर्नन एक सौ ग्राठ पुराखोक्त	१४१—१४४
श्लोक ग्रागम की वर्नन	१३६ १३६—१३७	कितकाल दोप उपद्रव वर्नन एक शौ ग्राठ पुरागोक्त वर्नन तरेपन भाव कथन केवल ग्यान कथन	844—844 846—844
स्रोक ग्रागम कौ वर्नन जीवं उतपित वर्नन सूरोदये मतेन वर्नन	१३६ १३६—१३७ १३७	कितिकाल दोप उपद्रव वर्नन एक शौ ग्राठ पुरागोक्त वर्नन तरेपन भाव कथन केवल ग्यान कथन पद्मनदि पचीसका	१५१—१५५ १५५—१६= १६=—१७१ १७१—१७२
स्रोक ग्रागम कौ वर्नन जीवं उतपित वर्नन सूरोदये मतेन वर्नन गर्भ नाम-सम्या वर्नन	१३६ १३६—१३७ १३७—१३८	कितकाल दोप उपद्रव वर्नन एक शौ ग्राठ पुरागोक्त वर्नन तरेपन भाव कथन केवल ग्यान कथन	१५१—१५५ १५५—१६= १६=—१७१

## **FOREWORD**

The Buddhi-Vilasa, which we are placing in the hands of scholars as the seventy-third number of the Rajasthan Puratan Granthmala, is a work which appears to have been written primarily for rendering the 'Nitisāra' etc, into a simple language for the use of common people of the Jain sect. The description of the chain of rulers and the description of the foundation of Jaipur, a new city by Sawai Jai Singh have come in secondarily, but prior to the main work. It had, however, become a practice among the authors of the medieval times to give adequate importance and respects to the rulers of the area or state where they lived in

The historical description of the ruling family of Jaipur and that of the foundation of the city of Jaipur though secondarily implied in the work has attained primary importance, the latter being a contemporary evidence as remarked by the editor in his introduction

The Buddhi-Vilasa is not a poetic work, but a narration of facts in simple metrical language. However, the author could not restrain his sense of poetic appreciation as, he has adopted some illuminating couplets of other poets in praise of the rulers of Jaipur. From the language point of view we find in the work a queer mixture of the Brajand the Dhoondari dialect spoken in Jaipur. The resultant form of speech tells us of the influence of the Braj-bhasa over the Dhoondari and vice-versa. A small lexicon of all such words can be prepared for the students of language.

Besides the history of Jaipur and the interesting description of the foundation of the new city, the author has made references to some important and interesting events relating to the development of the Digamber Jain sect particularly in Jaipur and in Rajasthan in general. The events relating to the practice of the use of 'langoti' and riding a palanquin adopted by Bhattarak Prabha Chandra of Chittor during the time of Peroz Shah, (p. 78), the origin of the Khandelwal caste among the Jainas (pp. 87-88), and lastly the ill-treatment received by the Jainas at the hands of one Shyam Tewadi and their rescue by the courtsey of Sawai Madhosingh I (pp. 151-52) described by the author as an eye-witness are the facts which need be verified by historical evidences. These provide very good material for study and research

B Ms No

1955

Name

Buddhı-Vılāsa

Copyist

Syōjī Rāma Bhāvasā, as desired by Jeevaņa

Rāma Śāha S/o Bakhata Rāma Śāha

Material

Paper, of an inferior quality

Script

Devanāgarī

Extent of the Ms

74 Folios, Complete

Size of leaves

 $8 \text{ cm} \times 6 \text{ cm}$ 

Number of lines

Average 15

Letters

33-35 per line

Writing

Legible, Corrections in the text with red

pigment

Age

Samvat 1863 (1 e A D 1806)

Begins

१ ॥र्व ि॥ र्ज नमः सिद्धेम्य॥

Ends

इति श्री बुद्धिविलास नांम ग्रंथ संसपूर्णम् । श्रुभ भवत् ॥ संवत् १८६३ का मिती ग्रासोज श्रुक्त ६ सोमयार लिषाइत जीवरारांम साह वेटा वषतरांम का दसकत स्पौजीराम भावसा का लिषवा में ग्रमुद्ध षोट होय तो मुद्ध करि लीज्यौ पाठ माफिक लिषाइत ज्यो बाचे सूर्ण सूर्णाव स्यांने जया जोग्य बचीक्यो श्रीरस्त कल्याएमस्त ।

॥बी॥१ ॥ब्री॥२ ॥श्री॥३ ॥श्री॥४ ॥श्री॥ रस्तु ।

Bakhata Rāma's indebtedness to Jai Candra Chābarā in practically all his writings. The BV, as Śāstri has put it, was regularly sent to Jai Candra Chābarā for review, and in support we reproduce a few remarks from Jai Candrau himself asking Bakhata Rāma to revise the text

<sup>&</sup>quot;जैसे फेरि पाना १६ भ्राया सो वांच्या त्यामे, तारों का विमान को परिणाम सर्व को पौण कोस को लिख्यो सो तिलोकसार मैं घाटि-वाघि भी लिख्यो छै।"

<sup>&</sup>quot;पटलिन मैं दूर्ज पटल मैं जघन्य आयु सागर की लिखी सो श्राघ सागर की चाहिजे सो ठीक करो।"

<sup>&</sup>quot;छदिन में मात्रा कही कही हीनाधिक हैं तथा तुक भी कहीं कहीं भ्रग्मिल है सो संभालि रूपों।"—p 102 of the article.

#### II

#### The Author

Bakhata Rāma Śāha son of Pema Rāja Śāha was a native of Chātsū situated about twenty-seven miles South-East of modern Jaipur The present text is essentially based on the well-known precepts of the Jaina religion and as such, the author has no claims to all original Besides the BV, we have another work assigned to him namely the "Mithyātva Khandana Nātaka",† (निष्यास्व ख़डन नाटक) once again based on standard Jaina texts Both the works refer to Bakhata's association with Jaipur where he had patronised the temple of Laskarī as a frequent visitor Bakhata was a Jaina by religion and a follower of the Digambara school

From the text itself we come to know that Bakhata Rāma Saha took up the work as desired by Pandit Kalyāna and Muni Guṇakīrti of the temple of Laskarī Relevant extracts from the "Mithyātva Khandana Nātaka" also, supplementing the BV are given below to show how much they are in harmony with each other The Nātaka is dated Samvat 1820 (i e 1763 AD)

"प्रथ प्रनेक रहैस्य लिष, जो कछु पायो थाह ।
वषतराम वरननु कियो, पेमराज सुत साह ॥१४१४॥
प्रावि चाटसू नंगर के, वासी तिनिकों जानि ।
हाल- सवाई जैनगर, मांहि वसे हैं प्रानि ॥१४१५॥
तहां लसकरी देहुरे, राजत श्रीप्रभु नेम ।
तिनकों दरसएा करत ही, उपजत है ग्रुति प्रेम ॥१४१६॥"

Sımılarly couplet No 1411 carries a hint to Bakhata's regard for Pandit Kalyāņa

Nāthū Rāma Premī has mentioned one more work by Bakhata Rāma namely the "Dharma-Buddhi Kī Kathā", (धम वृद्धि की क्या) so far, nowhere available in any of the Digambara Grantha Bhandār's of Jaipur

Certain fragmentary religious couplets find a mention of mere "Bakhata" which as the catalogue of the Bhandārs would reveal have been equated with the same Bakhata Rāma Śāha on the obvious conjecture as to be his pen-name. Such sketchy references slip away unless we could establish that they stood for our author. To quote a few lines from such

The autograph copy available in the temple of Pātodī, as gutkā No 2 Hereafter mentioned as MKN

miscellaneous couplets do such sentences, as "मेरा वष्त भला " or "तवही तू जानि लीज्यों मेरा वपत फला है ', land us anywhere ? Although they belong to a period about Samvat 1829 (ie 1772) but it may clash with reality for Besides, there are all chances of several contemporaries want of evidence having the same name, as is actually the case with one Bakhata Rāma Godha, who was a contemporary of our author, and most probably Premi mistook him for Bakhata Rāma Śāha when he quotes the "Dharma-Buddhi kī kathā" Couplet 86 of the text finds a mention of Kavi 'Rāma', and if probabilities be given a long rope we can take it to be the pen-name of our author, being the second word of his full name But, nowhere in the text he does it again We can, therefore, safely keep aloof from such trivialities, as they unnecessarily drag us towards speculations We have enough in the BV and the MKN regarding Bakhata Rāma Śāha to allow us to proceed with a certain degree of confidence Similarly the text of the BV is very much intact in nature and we have very little to gain by a third copy

#### III

Age

The work is dated Samvat 1827 (i.e. 1770 AD), the year Bakhata Rāma Šāha could finish this work. A substantial portion of the work is a mere translation into a simpler language of the well-known Jaina texts i.e. the 'Nītisāra' of Indraganī and the like. Other names occuring in the text have not been reproduced here to avoid sheer repetition. It reflects the honesty of the translator to have openly acknowledged the source of his writings. The work is thus the essence of different centuries, except the portion, contemporary to our author.

#### IV

#### Importance of the work

The BV is a work on religion The obvious gravity in the subject readily accounts for preachings and morality occurring in quick succession. However, diversions from the 'Nîtisara', and other old texts are many and they lend the work a new look and provide occasion for editing the text

In about twenty-three pages (6 to 28, of the printed text) the author has taken up the history of the Kaechwähä rulers of Amber and brings it up-to-date to his own times. The author belonged to Jaipur and consequently this local influence is repeatedly marked in the text. Elsewhere also, at several places he has brought Jaipur into picture. This brings us near to a wider conclusion besides revealing the secret behind editing such purely religious works. To the modern historian the BV

would have served little purpose, if the author had satisfied himself with a bare naming of the Kacchawāhā rulers. On the other hand, he has exhaustively dealt with the Jaipur of the times of Sawai Jai Singh as an eye-witness (also noticeable from the remarkable ease in which he has done it). In every case this portion is his own contribution to the text

One may raise the question, whether Bakhata Rama Saha was an eye-witness to that portion of the text where he has described the prosperity and other aspects of the new city of Jaipur founded by Sawai Jai Singh His MKN was completed twent y-one years after the death of Jai Singh in 1743 A D The grave nature of both the works is a clear index to his having attained maturity as a grown up man Besides, his works even as translations are not more mechanical reproductions of old texts, as is usually the case with professional scribes Bakhata Rāma Śāha had regularly exercised his own intellect and this also exposes the sedate in him. If one were to judge this work as a source of contemporary history it stands in gain in comparison with whatever little information we have on the medieval period of Indian History based mainly on the writings of the Persian Courtchroniclers The Non-Persian sources have not yet been studied properly and historians are very much unaware of such works as the BV, where historical passages appear and re-appear in works of the like natur. Possibly all such writings may no more change our conclusions towards the common trend of medieval Historical writings i.e. a mere record of simply what happened and when, and that too within the rigid framework of a predominantly Political History Medicial scholarship had certain serious They were all battle loving historians bare to the bone

Even in the BV there is the too common a defication of the Kings and their faultless deeds, but at the same time we come across a useful account of the new city of Jaipar, which considering its extent is not accidental, but motivated with a desire to give a contemporary account of great interest. It is most useful to pick up all such passages, even if they occur in manuscripts on subjects other than History. Besides, in such works as the BV, the author enjoys a certain degree of freedom in telling the truth which was rarely enjoyed by official historians can raise volumes of such 'relayent to history passages. While describing the city of Japur, the author has not viewed events exclusively from the uncle of small social units, and both the king and his subjects have placed their role in making the Kaechawaba Capital, truis an Eastern metropolis Tounded by the famous astronomer, Sawai Jei Singh, in takes its name from that illustrious prince to whom, the essence of history, lay in change He began to build with a passion with an insatiable curvesity and energy. The "Problem" to a with finite sile speed. He never cared to be surrounded by puppets to keep his pride high, rather he chose great men, from all quarters of the country — It is as a statesman, legislator, and scientist that his name has come down to posterity

Bakhāta Rāma Śāha has shown his awareness of the times of Prithvī Singh of Jaipur (1767-1778 A D) and the BV is dated A D 1770 He might have survived even longer, but as for his literary career the BV marked a close. Had he lived to see the reign of other princess that followed Prithvi Singh, he would not have missed to mention their names as he has carefully been doing with the royal lineage without indulging into chronological everlapping either. He has hurriedly passed through the reign of Prithvī Singh, and his predecessors with an awareness of their individual places in History limited to a paragraph or, at the most, a page, but coming to Sawai Jai Singh, he has shown that the astronomer cannot be put between the covers of a volume. His reign-period hung suspended in Hinduism. The range in mental abilities of Jai Singh must have been enormous

Having dealt with the main attraction of the work, it is essential to cover in brief the subject-proper which in extent is more mountaneous than the mole-hill, I have been discussing so far. The introduction here provides no occasion for a detailed account of the Digambara Paṭtāvali's, well-known works like the Tattwārtha—Sūtra (तत्वार्थ सूत्र) etc as having already undergone scores of popular editions Beginning with the Jaina Geography the author has traced the entire history of the Digambara sect, where the most interesting portion happens to be the one that deals with the establishment of different Jaina scats (gacchas, तक्त्र) at places like Jaipur, Sāngāner, Chittor, Nāgaur, Raṇthambhōr etc. They tell us of the spread of Jainism in Rājputānā. Scholars are of the view that the main purpose of our auhor was to arrest the growing strength of the so-called "Thirteen-Panthīs" (ताह पर्यो) whose ways were not liked by serious divines who grew alarmed

In the text there is a mention of the open conflict between the Jainas and the Vaişnavās of Jaipur, particularly during the time of Sawai Mādho Singh I The author has passed personal remarks against one Shyāma Tewāḍi—a troublesome Vaiṣnava Although very much in the nature of a direct hit against the Vaiṣṇavās, however, the author has nowhere played the bigot This portion of the work needs a study The rulers of Jaipur had regard for both the Jainas and the Vaiṣṇavās, and did their best to find ways and means acceptable to both, on occasions of conflict

Other passages of the text, deserving an elaborate treatment, have been noticed immediately in the following pages. Similarly, the various foot-notes running parallel with the text would prove useful.

In the end, I take this opportunity of expressing my deep regard for the revered Acharya Muni Śri Jinavijavji Maharaja, Honv Director of the Institute, and Shri Gopal Narayan ji Bahura, Deputy-Director, who have given me the opportunity to work on this ms under their guidance and constant encouragement

Rajasthan Oriental Research Institute, JODHPUR,

Padmadhar Pathak

12 December, 1963

## APPENDIX A

## 'नगर उतपति वरनन' P.14, L.13.

Eight miles to the South of Amber, the previous capital of the Kaechwahrs, Jai Singh founded a new city of Jainagar or Jaipur. The rull us of Jiipur was the palace and garden at Jai-Nivas, the foundation of which was laid in A.D. 1725. Then followed the construction of the 'Chandra-Mihal' and the 'Jai-Sagar', but the plan and the construction of the entire city as such, began from the year 1727.

In Singh observed all the religious practices required at the time of the foundation laying ceremonies as prescribed in the Hindu texts. This work he assigned to his 'guru' and the official high-priest named Jagannatha Samrata. Due propitiatory rites like the 'Vinayaka Shanti', 'Vastu-Shanti', and the Nava-graha Shanti' were all performed by Jagannatha. If what the 'Manasara', (a well-known treatise on Hindu architecture) says be followed, the astrologer priest must be proficent in the Vedas and Sastras. Jagannatha fulfilled this qualification. He was granted eight 'bighas' of land, free of rent in the village Hathroi, now a part of the present Jaipur. The deed or 'patta' granted to Jagannātha is given below, as it helps us deciding the exact hour and day of the foundation of the new capital.

' डोल फरार मिती जेठ सुदि म साल सम्वत १७ म पुग्य उदिक घरती बैं ॰ जगनाथजी समराट ने जो सवाई जपपुर बसायो ती नेमत मिती पोस विद १ सम्वत साल १७ म ने घरती बीघा म झके झाठ सकलप करी सो वास्ते घरती के मीती माह सुदि १५ सम्वत १७ म मारफत किसनराम की झरज पहोंची हुक्म हुवा घरती बीघा झाठ छोयो ती मधे बीघा ४ सवाई जयपुर को बाग के वासते व बीघा च्यार नजीक गाव सताई जयपुर का की स्यालु की दीज्यो बरसाले दीवाए नारायएदास किरपाराम दाखिल वाके करो घरती बीघा झाठ मा । तफसील सवाई जैपुर की बाग के बास्ते वीघा च्यार ४ गाव मोतपुर नजीक ह्यरोही मधं वा स्यालू की वीघा च्यार ४ ।

## मु० याददास्ती च मोहर कीसनराम वाके दसकत ।

In all a sum of Rupces 1083 and annas five were spent in the ceremony, as supported by the following document contemporary of the event

"डोल करार मिती फाल्गुन विद १ सम्बत १७६४ पुन्य जो सवाई जयपुर नवीं बसायों तीठं मिती पोस बिद १ सम्बत १७६४ विन्दायक सांती, वा वामुत सानी, नोगिरह सांती करवाई त्याने लाग्या सौ रुपया १०६३। के वास्ते मारफत स्वामरास्ट नाथजी की मिती माह बिद ११ सम्बत १७६४ म्रजं पहुंची हुक्म हुवा सीगे पुन्य के दाखल कर तनखाह खजाना माल इतमाम खोज पता का परी तनखाह कर द्यो वरसाले दीवान नरायणदास वा किरपाराम दाखल वाके करो रुप्या वसुली एक हजार तीरासी ग्राना पाच दीज्यो १०६३। ।

मु॰ यादीवास्तीन महोर स्वामरास्ट नाथजी वामे दसषत दीवानीयान दा॰ स्याहे हजूरी मिती माह सु॰ ६ सम्बत १७६४ किता १—।

Both the documents have been used above because there is lack of unanimity among scholars as regards the exact hour and date of the foundation ceremony. Copies of these were formerly preserved in the 'Dewani Huzuri' office of the erstwhile Jaipur State. These may now be verified from the records of the Rajasthan Archives Department, Bikaner. Also, the pattas for the grant may te traced out in the family records of the Samrat Obviously, depending upon a source secondary in nature, however, such evidences have more weight than later records. Other works that differ in dates need not be cited here till the Jaipur Pothikhana is thrown open for scholars and the original documents studied.

Sawai Jai Singh was deeply interested in the study of town-planning and he had read many books on the subject. The new city built by him was planned by Vidyā Dhara, a Brāhmin from Bengal The entire theoretical lay-out of the city was his. In his memory one street and a garden i e 'Vidyā Dhara ka Rasta' and 'Vidyā Dhara ka Bagh,' (in the Purana Ghat) still exist in Jaipur.

The rise of this family of Brāhmins from Bengal is due to Rājā Mān Singh of Amber On his return from the Bengal expedition he is said to have brought with him an idol of 'Śilādevī' from there, and is even to this day kept in Amber With the idol of the Goddess accompanied Her hereditary worshipper Purohita Ratnagarbha Sārvabhauma Bhaṭtācārya, a "Pāścātya Vaidika Brāhmana" Vidyā Dhara belonged to this very family† Deb, has given the

<sup>†</sup>Vidy adhara - Bimalcharan Deb

genealogical tree of his family begining from Rajendra and closing with the mention of Sivarama (1904-5 A D)

Vidyā Dhara was appointed 'Diwan' after the death of his maternal uncle Kishan Rama Later on, when Sawai Madho Singh ascended the throne in 1752, Vidyā Dharā withdrew himself from the scene He earned the fury of Mādho Singh who confiscated all his possessions, and the illustrious family vanished from the stage of local history

The BV makes no mention of Vidyā Dhara, because it is more a description of a general nature. It was left to the interested to fill up the blank. The 'Isvara-Vilāsa-Kāvya'‡ by Krṣṇa Kavi is dated 1744, written hardly a year after the death of Jai Singh. In the tenth canto (सर्ग) of his work, he has clearly mentioned Vidyā Dhara

"बनालयप्रवरवैदिकगौडवित्र क्षित्रप्रसारसुलम सुमुख कलावान्। विद्याघरो जयति मित्रवरो नृपस्य राजािघराजपरिपूजितशुद्धबुद्धिः॥"३८॥

There are many more passages in this work that remind us of Vidyā Dhara and his ancestory

Girdhārī wrote the 'Bhōjana-Sāra' in his capacity as the courtpoet of Jai Singh This work is dated A D 1739 and is yet unpublished \* The 182nd couplet of this work on dietetics quotes the name of Vidyā Dhara as the architect of the new city

> पुरा करें बहु हरख करि, मन महि मोद वढाय। विद्याधर सोंं बोलि कहि, सहर सु एक बसाय॥

Vidyā Dhaia thus occupied a significant position in the history of Jaipur Col James Tod, has spoken of his genius as an adept architect and astrologer. He has fallen into the error of holding Vidyā Dhara as the follower of Jainism, and a Jain by birth as well. He writes, "Vidya Dhara, one of his chief coadjutators in his astronomical pursuits, and whose genius planned the city of Jaipur, was a Jain, and claimed spiritual descent from the celebrated Hemachandracarya, of Nahruala, minister and spiritual guide of his namesake, the great Siddhrāja Jai Singh."

The annalist does not mention the source of his information. This is in brief the initial story of what our author has prefered to

<sup>†</sup>Pub in the 'Rayasthan Puratana Granthmala' no 29

<sup>\*</sup>Preserved in the Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona

sum up in a mere sentence 1 e. "नगर वसायों यक नयी, जयस्यंच सवाई।" He then proceeds to describe the condition of the people, who were attracted to settle there because of the general economic prosperity

(२) "त्याऐ नहैरि वाजार माहि, विचि मैं वंवे गहरे रपाहि। चौकिन में कुड रचे गमीर, जग पीवत तिनकों मिष्ट नीर॥"१०१॥ p 15, 1 (9-12)

A canal was built to supply water to the new city. Ananda Ram Mistri was commissioned to survey the neighbourhood. His report written on 16th July, 1726 is still preserved. The source selected was the Jhotawada river, four miles north-west of the new city. The device made to bring water in the city can still be traced out as the entire water route lies buried below the busy market streets of the city.

The water reservoirs were public places situated at the two chaupars, (four-sided meet) then popular as the 'Sanganeri-chaupara' and the "Amber ki chaupara" Unlike what they look like today, formerly they were in the form of reservoirs (Kunda) with steps leading to the surface of water. Later on, when more water taps were installed during the reign of Sawai Ramsingh in different localities of the city these reservoirs lost their importance and were used for the 'tenth day bath' after burning the dead. On this particular day, the relatives of the dead, before a bath, had to entrust their heads to the barber, whose function it was to remove all their hairs, and give the top a coconut-like apperance. These barbers used to sit under the bada tree still standing in the four corners of these chaupars memory of their past headquarters a few foot-path barbers are still seen sitting under these shady trees. During the times of Sawai Madho Singh II these water-reservoirs were converted and given the present decorum

(३) 'ग्राऐ निजूमी जोतिगी, यहुरधौं फिरगी कौतिगी'। तिन रच्यों जंत्र विसाल है, ताम ग्रहीं की चाल है ॥१०४॥

So great was Jai Singh's enthusiasim with which he pursued his study of astronomy that he sent envoys to Europe to ascertain what progress they had made in the science of the Heavenly bodies "Teringi", has been used here for Father Padre Manuel de Figueirodo,

who was relieved from the Mogor mission at Agra, to help Jai Singh in his work. This was in 1730. The father went to Europe, to bring books and astronomical instruments. His friend Pedro-de-silva Leitao, who had come from Goa settled in Jaipur where he died about 1792 AD Silva's grandson was a physician of repute known as Hakim Mārtin\*. He became an influential courtier, but his family did not survive long

For an exhaustive study of the subject, we have nothing to equal G R Kaye's "A Guide to the Observatories at Delhi, Jaipur, Ujjain, Benares," published from Calcutta in the year 1920

(४) तहँ रहेँ कारवाने छतीस ॥१५१॥
यह हुतौ कारवाने त नौंस,
पारसी नाम ता मिं दोस।
नृप काढि हिंदवी नाम कीन,
गृह संग्या यह ठानी नवीन ॥१५२॥

The Mughals had a smooth system of running the administration through various departments each designated a "Karkhana" Borrowed from Persia, in the words of Huart, the Karkhana system had come to stay in Hindustan with the rule of the Mughals, although even before, during the pre-Mughal period of Muslim governments in India the system was in knowledge. Basically, these departments dealt with the management of the royal paraphernalia. The Karkhana system soon became model for practically the whole of Hindustan, leaving the Rajput States no exception to it, particularly Jaipur of the Kachawāhās who had very close relations with the affairs at Delhi and Agra

The author has mentioned thirty-six Karkhana's which were essentially the same as mentioned by Abul Fazal in his Āin But, as the work shows, it was Jai Singh who brought a change by giving Hindi names to the hitherto existing Persian names for these departments. The author then proceeds to describe the new-names and abruptly

<sup>†</sup>Read Clement Huart's "Ancient Persia and Iranian Civilization"

<sup>†</sup>Read Afif's "Tārikh-1-Fırujshāhī"

<sup>\*</sup>The descendants of Hakim Martin are still living in Jaipur They enjoyed a big Jagir of village 'Banar', a Rly Sin in the west of Jaipur known as 'Nin lar-Bainar on the Jaipur-Jhunj'innu line

finishes the subject supplying four names only ie "Gaja-Graha", "Aśwa-Śālā", "Ratan-Graha" and the "Dhan-Bhandāra" The link ahead is not possible from the work itself, but other unpublished sources including the Jaipur records preserved in the State Archives of Bikaner, throw further light on the subject, although in some cases they may cause modifications when the Archival papers have been carefully studied and properly assessed

In the State Archives of Rajasthan at Bikaner, we have many Il the details of the rome

bundles of documents given namely,	ing all the details of the various Karkhanas,
(1) Kukarı-Khana	(It dealt with the private treasury of the Jaipur rulers Later on it merged into the 'Kapaḍ-dwārā')
(2) Butāyat	Dealing with the maintenance of orderlies and conveyance
(3) Kośa-Graha	(Part of the Kirkari-khana)
(4) Tośā-Khana	(Store-room of ornaments, precious-stones, robes etc of the rulers and their house-hold members).
(5) Zeen-Khana	(Department dealing with the saddlery of horses, robes etc of the rulers and their house-hold members),
(6) Ratan-Graha	(Store-room of precious stones, such as pearls, rubies etc)
(7) Kothı-Hazurı	(Later on called as Modī-Khana)
(8) Khazana	(Royal treasures)
(9) Feel-Khana	(Department dealing with the maintenance of elephants of the State)
(10) Top-Khana	Deptt of arms and ammunition
(11) Baraat	Deptt for making arrangements for the Royal processions

kaţāra's etc.)

members)

(12) Sileh-Khana

(13) Khusbū-Khana

(14) Okhad-Khana

(15) Gaoo-Khana (16) Tambol-Khana (Dealing with the maintenance of armoury,

namely swords, shields, spears, barchi's,

(Preparation of the perfumeries for the use

(Preparation and supply of medicines to the

(Maintenance of cows and supply of milk)

(Betles for the rulers and their household

of rulers and their family members)

rulers and their family members)

### बुद्धि-विलास

•		3
(17)	Rasoı-Khana	(Kitchen and its arrangements)
(18)	Patar-Khana	(This department employed the dancing girls
		at the time of Darbars and other royal
		functions).
(19)	Fàrrasa-Khana	(Maintenance of the entire camp equippage
		of the rulers)
(20)	Rang-Khana	(Preparation of colours of all kinds).
(21)	Surat-Khana	(The drawing of pictures and portrarts was
	1	the main function of this department)
(22)	Khyal-Khana	(Associated with the preparation of fire-
		works and their display on important festi-
		vals and functions)
(23)	Shutar-Khana	(Maintenance of camels and their supply
		was the main function of this department)
(24)	Seewan-Graha	(This section dealt with the sewing of the
		royal robes for the rulers and their house-
		hold members
(25)	Ghoḍa-Nıkas	(This section collected taxes on the import
	(Nakkhas)	and export of horses in the state)
(26)	Dag-Ghoda	(The branding of horses, maintained by the
	,/	jagirdars was, the main function of this
	<u></u>	department)
(27)	Mewa-Khana	(This department dealt with the supply of
•	•	dry fruits for the use of the rulers and their household members)
(20)	China Vhana	(Dyeing and designing of the clothes), later
(28)	Chhapa-Khana	on the name was given to State Press
(20)	Agra Jantra Graha	(This section supplied articles required for
(29)	Agra Jamra Grana	performing yagña)
(30)	Masala-Khana	(Department to make arrangements for
(20)	277 417 417 417	lights, chiefly the Masal's used at the time
		of the marches of the army)
(31)	<b>Imarat</b>	(Construction and maintenance of the
( = - )		buildings belonging to the state)
(32)	Gunijana-Khana	(This department made necessary arrange-
144		ments for musical performances by the
		singers)
(33)	Rosana-Baqı	(The daily accounts of Kothiyar Huzuri,
		showing the amount of balance receipt, and
	,	expenditure of various Karkhanas e g Sileh
		Khana, Topkhana etc were maintained by this deptt?
		Andrew . At a Late Control of the Co

(34) Pothī-Khana

(35) Palkī-Khana

(36) Karkhana Punya

Royal Library Palanquins Deptt

Incharge of the ecclesiastical rites performed by the king

Except 3, 6, 14, 15, 17, 24, 29, 34, 36, none of these above mentioned Karkhanas seem to represent the new-form as referred to in the BV

We now come to another manuscript; which is a hand-book of different topics begining with a topographical account of India under the Mughal map. Though undated, it belongs to the 18th C, and has been discovered from Jaipur. One Dalpatinarayan is the author, who has disclosed his name on page 23rd of the manuscript. From page 17 to 26 there is a separate section on the titles and duties of the State-officials and the names of the 37 Karkhanas. While quoting the Karkhanas he has given a comparative chart of the Persian and Hindi names of the departments. Possibly, the necessity for supplying such a comparative chart might have arisen to facilitate indentification of the new-names quoted against their previous 'Sambhodan'. This work contains the following chart of the Karkhanas.

शय्यागार	सुखसेजषाना	<b>कु</b> प्पशाला	रिकाबषाना
मज्जनागार	गुसल्लषाना, हम्माम	काश्यागार	ठठेरंषाना
देवायतन	तसबीहषाना	महानस	ो बबरचीषाना रसौडा 
पुस्तकालय	किताबषाना	जलगृह	श्राबदारषाना, पार्गोरा
चित्रागार	तसवीरषाना	तांबूलगृह	तबोलषाना
भैषज्यागार	दवाईषाना	प्रतिश्रय	बिलगोरषाना, लंगर
,फलागार ,	मेवाषाना	ऋयशाला	इबतियाषाना '
कोष्टागार	जषीरा, ग्रवार	सीवनागार	क्रिकराषाना
t	कोठार	नेवथ्यांगार	तोशकवाना, कंपडदारा
महौषधीशाला	'मोदीषाना		
सुगघाकार	षुराबोईषाना	यानशाला	रंथषाना
	सौंघाषाना	ţ	, ,
वर्णागार ं	र्गषाना	पालकागार	पालकीषाना 💍
कलादागार 🖟	· जरगरषाना	दारुकर्मालय	षातिमबदषानाः
रत्नागार	🔻 🥠 जवाहिरषाना	दीपिकागार	<sup>'</sup> शमें, चिराग्षानी
प्रहरराकोश	्र कोरषाना, सिलह्षान	ा लेखंशालां '	दर्फतरषाना
सस्तरांगार	फराशषाना	मृगयागार	शिकारषाना । ।

<sup>†</sup>Rajasthau Oriental Research Institute, Jodlipur Ms No 17727

श्रीगृह दानकोश	वजाना, भडार बिहला	शाकुनिकालय	कोशषाना
मठरा	ग्रस्तबल तबेला		
चतुर	फीलघाना		
<b>'सदानिनी</b>	गावषाना		
'उष्ट्राला	श्रुतरवाना		

As already hinted above, a complete list of the names of these departments maintained with a changed nomenclature during the time of Jai Singh can only be prepared when Archival documents have been studied However, the manuscript used above covers much of the information sought after The novelties introduced by Jai Singh in the field of administration requires a further explanation from historians who find in it a weakening of the Imperial prestige following the death of Aurangzeb

(ሂ) नृप कीन्हें ग्रसमेदादि जग्य, वह दान विये लिख द्विज गुराग्य। यह जस फंल्यों चह दिसि मकार. सुनि ग्राये श्रपोर ॥१६४॥ धन धान्य ठौर दिए ग्रधिक राय।

p 26 1 (1-6)

These lines at once suggest the gradual revival of the ancient Hindu traditions so forcefully put to action by Sawai Jai Singh Considering the times. Vai Singh lived in, it was a bold attempt on his part to set aside the general conduct expected of a vassal of the Mughal Empire. How, and in what speed things took a turn is beyond our purview but it goes partially established that Jai Singh rose high having gained a marked ascendancy over the Imperial dictates 'Ashwamedh', had long ceased to be performed, but it appeared again under his attempts D C Sircart on the grounds that being a subordinate to the Mughal Emperor, Jar Singh could not have performed such a sac rifice Evidence contemporay, as also slightly

<sup>†</sup> Sawai Jayasingh of Ambel :\_Indian Culture, vol III, no 2, pp 376-379.

The portion that deals with Jai Singh's march against Jodhpur, is merely part of an annexure to a 'gutka'. The first two works of this 'gutka' are dated V S 1726 (A D 1669), but the one in question carries neither date nor the name of the scribe. But, the script and the mode of writing put it close to the event. The whole of it has been reproduced below, and incidentally the present description is more elaborate than what Ojha and others have given in their histories.

According to this manuscript the event took place in V S 1797 (A D 1740) Jai Singh took fifteen days to reach Jodhpur and halted near Mandor Abhay Singh refused to come in the open and agreed to purchase peace on conditions laid pown by Jai Singh ie war expenses and other levies. There is also a mention of the participants and the numerical strength behind them who had joined both Abhay Singh and Jai Singh. Abhay Singh though well set to risk a battle had prefered to surrender ultimately with the result that the Rathors felt highly humiliated. The Emperor had taken the side of Jaipur.

#### ॥ श्री रामजी ॥

सबत १७६७ का मीती सावण बदी म नो श्री माहराजा सवाइ जैसघजी जोघपुर युपर चढा राजा श्रमें संघ रें हुकम पातसाह महमुदसाह का ये चढा सो रोज पदरा में १५ जोघपुर जाइ लागा अरफ महावर की डेरा जाइ कीया मुकाम १ ... ..... श्रमें सजी † † स्यो राड १ करवा सारी जमीत सेती राढी करवा ने श्रसवार फोज चढ गया तब त बीसटालो हवो सो इ भात ठाहरी।

#### राज जमीती\*\* खरच बुग्य≁

<sup>†</sup>कपर ।' ‡ग्रमयनिह ।

<sup>1</sup> Made 1

<sup>+</sup>पन्द्रह ।

<sup>††</sup>प्रमयसिहजी ।

<sup>1193.1</sup> 

<sup>\*\*</sup>जभीयत ।ः

<sup>--</sup> वगैरह।

कीसोरसघ भाइ नै जालोर को प्रडगनु दीनु 2000000) भरुदो गाव ۶ 800 प्र० श्रजमेर का प्रगना -80

### इ भात ठहराइ तदी कूच कीयो।

राडी कोइ हइ नहीं मी॰ भादवा सुदी १ बुधवार उलटा श्राया जित ऐती लारछी श्रसवार ५००००

रुपनगर को राज	π	सुरजमल जाट		राजा	बषतसंघ नागोर क०
<b>श्र</b> सवारः	पाला†	श्रसवार	पाला	श्रसवार.	पाला
२०००	१०००	X000	5000	५०००	३०००
सोसघ राठोड‡			उमेदसंघ	साहपुरा वाल	ती :
ग्रसवार	पाला		ग्रसवार		पाला
१०००	१०००		8000		3000
श्रसवार	पाला				
४००००	00000EX	0			
करोली को गोप	ालसघ राजा		वीकानेर	को राजा जो	रावरसंघ
ग्रसवार	पाला		ग्रसवार		पाल
१०००	५००		४०००		2000
			• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •	?	
सादो सेखावत			भीगाइ	का	
श्रसवार	पाला	•	श्रसवार		पाल
३०००	8000		१०००		१०००
राएाजी की जमीन		घर माहराजा श्री सावाइजी क जमत			
ग्रसवार	पाला		ग्रसवार		पाल
₹000	३०००	•	२ ०००	•	२४००●
हायी:	उट जुजाल	ā <sup>‡</sup>	बाएा क	ा बुटो 🕇	
800	X000		४००		

<sup>†</sup>शिवसिंह।

प्रवेदल Also पाल ।

<sup>\*</sup>बोकानेर मे ऊँट को जाजलिया कहते हैं, विशेषतः वह ऊँट जिसमे जजुरवे (मोटी ताल की बन्द्रकें लगी होती हैं ) यह बन्द्रकें फौज की रवानगी का सूचन करती हैं।

<sup>†ं</sup>जजुरवे वाले ऊँट।

नगदी का ग्रसवार ५००० तोवषाना की सुमारां नहां

बुदी का राज दलेलसघ की लार*		नोफोट मारवाड			
भसवार	पाला	मडोवर.	श्रजमेर को	पुगल	
३०००	२०००	१ जैसलमेर	१ पारकरगढ	१ श्रमीसुरो	
		१ जालोर	१ वीकानेर	१ इद्ररगढ	
	~	१	१	१	

श्रर श्रभंसघ की लार फोज इतनी छी सो लडो कोइ नही सवाइजी की पते हुइ श्रसवार १५००० हाथी १५ पचादं १५००० 'राठोड मोत बुरा दीप' 🛨

गिरणना ।

<sup>‡</sup>नहीं।

<sup>\*</sup>पीछे ।

<sup>†</sup>विंदल ।

<sup>‡‡</sup>The Rathors felt highly humiliated

### बखतराम साह कृत

# बुद्धि-विलास

'र्ऊ नम सिद्धचे भ्य नमः' प्रथ बुद्धि-विलास नांम ग्रंथ लिष्यते ॥

छप्रै: समद-विजय असत जिन स्, नमत श्रघ हरत सकल जग। कुमर-पद हि तप-षड्ग<sup>४</sup>, लियव कर हिनय करम-ठग ॥ भरम-तिमर सव<sup>४</sup> नसन, उदय हुव तिभवन दिनकर। जिप भिव मिवदिष तरत, लहत गित परम मुकतिवर ॥ तसु चरन-कमल भविजन भमर, लिष लिष श्रनुभव रस चषत। वह करह नजिर मुभ परि सु जिम, सुफल फलिह हम किह वषत ॥१॥ श्रादीस्वर तें महावीर जिन लीं तीर्थंकर। सकल भये चौवीस, वहरि तिनंही के गनघर॥ वषभसेन व द्रादि ग्रत गोतम लीं नामो। चौदहसै त्रेपन जु भये तदभव सिवगांमी॥ फुनि श्ररहत<sup>3</sup> सिघ श्राचार्य श्ररु, उपाध्याय सव साध्रवर। है, होंहि, ह्वं गऐ, तिनु नमें, वषतराम जुग जोरि कर ॥२॥ महा विदेहिन बीस जिन, सास्वत रहे विराज। दोहा ? : तिनहि नमत सूष संपजै, जात सकल ग्रघ भाजि ॥३॥ वंदौं वांनी सरस्वती, मन वच तन सिर नाय। जाकी क्रपा कटाछि तें, बुद्धि वहै सुषदाय ॥४॥ छुद पद्धरी : श्री गुर-प्रसाद लहि वृधि विकास, रिचहौं, व गृथ यह वृधि विलास।

तामे वरनन लिष सकल सार,

भविजन पार्वेगे सुष श्रपार ॥४॥

१: B opens with '१।।दंगा र्जनम सिद्धेम्य.।।'। २ बुद्धि-विलाश । ३ बिजय। ४ षडग । ५ सव । ६ मिव । ७ मुकतिवर । ६ मिवजन । ६ बषत । २:१ वृषमसेन । २ मरे। ३ श्ररहत ।

३:१ दौहा।

#### वुद्धि-विलास

कीन्हे असमेदादि भ नृप वह दांन दिऐ लिष द्विज गुराग्यः। यह जस फैल्यो चहु दिसि मक्सार, श्राये सुनि विप्रादिक श्रपार ॥१६४॥ वंह्मपूरी मैं दे तिन् वसाय, घन घांन्य े ठौर दिय ग्रधिक राय। पूरव दक्षिए वीचि श्रीर, फुनि विषम ठौर ॥१६५॥ गिर परि श्रंवागढ कं उपवन ग्रनेक. चहघां पूर तरु सुफल फले तिनमें प्रतेक । फुनि वन गिर सोभा श्रति लसंत, तहां घ्यान घरत मुनिजन महंत ॥१६६॥

दोहा ' हुती राज ग्रंवावती, सो जयपुर मैं ठानि।

करन लगे जयसाहि नृप, सुरपित सम सुष दानि॥१६७॥

भये भूप जयसाहि कै, पुत्र दोय ग्राभिराम।

ईस्वरस्यंघ भये प्रथम, लघु माघोस्यंघ भी नांम॥१६८॥

रांमपुरो ' दुर्ग भान कौ, ताकौ लें के राज।

दीन्हों माघोस्यघ कौं, सिग दये दल साज॥१६९॥

वहुत वर्ष लौं राज किय, श्री जयस्यंघ ग्रवनीय।

जिनकै पिट वैठे स्वदिनि ', ईस्वरस्यंघ महीप॥१७०॥

तिनकी दांन क्रपान कौ, जग जस करत ग्रपार।

जिन सौं जंग जुरे तिन्हैं, करि छांड़े पतभार॥१७१॥

١

१६४ १ ग्रसमेधादि ।

र्देप् १ घान ।

१६८: १ माधव।

१६६ १ रामपुरौ। १७०: १ सुदिन।

<sup>†</sup>Aswamedh Yagya.

<sup>‡</sup>Able Brahmins
\*(b 1721—d, 1750 A,D) Also see the "Isvaravilasa-Mahakavya" (Rajasthan Pura

Granthmala No 29)

tt(1750 67 AD)

मांन-वस-भांन जयसाहि कै समान स्याम, दान सौं घनद के॥ गुमान निज श्रनहद<sup>२</sup> के जराऊ सदके, साज मोती कर हार रद के ग्रनाथ दीन दरद के। जबूनद के तुरंग करी-कद के. जीन मतंग मति मद के कढत सदा सदके ॥१७७॥

चढी फीज करि कोप, भिरि भागे । जट्टा प्रवल। सोरठा : नई चढी यह बोप, कछवाहन की तेग की ॥१७८॥

तिनकै पटि वैठे पुहमि, प्रथ्वीस्यघ दोहा । सकग प्रजा पोषन मर्नों, प्रगटे श्राय सुरिंद ॥१७६॥

श्रग<sup>२</sup> ग्रंवावती पीठि उग्यौ, ਰਵੈ छंद भुजग मनौ अर्क सौ उग्र तेजा सुहायौ। प्रयात सेतून के दिन्वि वाने, श्रासीक्त १ धर्म घरे वडे भाग कौ छत्र मार्थ तनायौ॥ म्हाराज<sup>ध</sup> राजेस्वरी<sup>६</sup> की क्रपा<sup>७</sup> तै<sup>=</sup>, म्हाराजि राजान<sup>६</sup> कौ विश्व भायो। पालिवे कौ प्रथीराज<sup>9</sup>° मानीं, प्रथी प्रथीस्यघ कौ घारि के रूप स्रायौ ॥१८०॥

प्रथ्वीस्यंघ विष्यात, जा दिन ते सूपति भऐ। सोरठा १ : मिटे सकल उतपात, सुषी भई सारी प्रजा ॥१८१॥

लषौ भागि-वल भूप कौ, मरचौ गयो रिपु जाट। दोहा : भऐ सत्रुतं मित्र सिष, इहै पुन्य को थाट ॥१८२॥ श्रासिष, प्रथ्वीस्यंघ नरेस। नर-नारी श्रचल राज करि जगत की, रक्ष्या<sup>9</sup> करी हमेस ॥१८३॥

२ हरव । १७७

१ भाग्यौ । २ कछवाहिन ।

१ ग्रन्योक्ति। २ प्रुगा ३ मनी। ४ missing। ५ महाराज। १७५ १८० ६ राजेश्वरी। ७ किया। दते। ६ राजानिं। १० प्रथ्वीराज ।

१ सौरठा। १८१

१ भाग्यबल । २ गयौ। १५२

१८३ : १ रक्षा ।

जो हैं तिहुँ लोकनिको प्रमांन, सो प्रथम वरन करियत सुजांन। प्राचीन गृंथ श्रनुसार पाय, स्वरवांनीकी भाषा वनाय।।६।।

दोहा प्रथम सूमि मधि लोककी, चित्रा नांम कहात।
तातं जोजन लक्ष यक, ऊँचे स्वर्गः विष्यात। ७।।
मद्धि जोतिषी-पटल मैं, ग्रिथिरनुको यह हेत।
मेर सुदरसन ग्रादिकी, नित्ति प्रदिषिसाः देत।।।।

#### स्वर्ग नामां

किवतः सउधर्म ईसांन थ्रौ सनतकुमार जांनि,
बहुरि महिंद्र वृह्म ब्रंह्मोतर जानिए।
लांतवः कापिष्ट शुक्र महाशुक्र है सतारि,
सहैश्र्भारि श्रांगत प्रांगत पहचानिए।।
श्रारण श्रच्युत भऐ सोलह सुरग तिन,
उपरि है नौ ग्रीवेक तिन्हें उर श्रांनिए।
तापै नौ निड़ोतरे॰ के परि पांच पिच्योतरे॰,
तिन परि 'मुक्ति-सिला सिद्ध' ठौर मांनिए।।।।।

दोहा : वाही चित्रा भूमि कें, तिल भुवनालय जांनि। जोजन लक्ष प्रमांगा फुनि, तले नरक दुष-दानि।।१०।।

#### नरक प्रभा नांम'

रत्न सर्करा वालुका, पक घूम तम सोदि। वहुरि महातम सात ऐ³, तिन तिल कही निगोदि।।११॥

७: १ इवर्ग ।

८: १ प्रदिषणां।

ह १ निडोतरे। २ पिचौतरे। ३ सिद्ध मुकति सला।

११: १नाम । २ बहुरि । ३ सातए।

<sup>†</sup>According to the Svetambara's there are twelves "Swarga's" only, whereas the Digambara's stick to sixteen i. e. ब्रह्मोत्तर, कापिष्ठ, शुक्र, शतार in addition. ‡is it Atlantic?

या विधि ए सछेप से, वरनें सकल सथांन ।। श्रब दनकी सुनिये सकल, घनाकार मतिवान ॥१२॥ प्रथम अनत अलोकाकास, दसौं दिसा मरजाद न जास। चौपई पुरुष म्राकार, चौदह राजू ऊँची सार ॥१३॥ तामें लोक ज्यों कटि पुरष हाथ धरि दोय, पग चौड़े करि ऊभो होय। इम ग्रलोक मै लोक कहंत, ज्यों घर मै छींका लटकत ॥१४॥ घनाकार तिन की सूनि लेह, विधिवत ज्यों भाज सदेहु। तीन सै तेतालोस, होत जु भाष्यी जिम जगदोस ॥१५॥ प्रथम हि भूमि निगोदि-तलि, लांवी चौड़ी जांनि। दोहा : सात सात राजु कही, फ़ुनि सुनिए गुनषांनि ॥१६॥ ऊची राजू सात है, मिद्ध लोक लौं सीय। जेम श्रन्न की रासि फुनि, श्रर्ध<sup>9</sup> तरौं नां होय ॥१७॥ मद्धि लोक भुव नांम जो, चित्रा कह्यौ विष्यात। पूरब पछिम ऐक रजु, दक्षिरा उत्तर सात॥१८॥ तामें राजू ऐक ती, चित्राकों ले ताहि। तैली राजु सात भव, चौड़ी मांहि मिलाहि ॥१६॥ भई म्राठ राजू सबै, तिह म्राधी लै च्यारि । ताकौं लंबी सात सौं, गुनि लीजिऐ विचारि ॥२०॥ सोरठा : होत गुने श्रठवीस, सो गुनि ऊची सात तै। घनाकार जु भईस , रजू ऐकसौँ छिन्नवै । ॥२१॥ दोहा ? : फुनि वा चित्रा भूमि ते, ऊंची राजू सात। वात-वलय लौं जांनि तस्, भाग दोय गिनि भ्रात ॥२२॥ वृंह्म रवर्ग लौं भाग यक, पहिले घटि फूनि वाधि ।

वात-वलय लौं दूसरो<sup>3</sup>, विं घटि लीजे साधि ॥२३॥

१२:१ अब। २ सुनिए।

१४: १ चौडे। २ ऊमी।

१७ : १ ग्रह् ।

२० १ च्यरि।

२१: १ मईसु। २ छिनवै।

२२ : १ दौहां A does not use दोहा at all । २३ : १ ब्रह्म । २ विघ । ३ दूसरी ।

 मिद्ध लोक चौड़ी इक<sup>2</sup> राजू सांच है, श्रिरिल १ व्रह्म स्वर्ग वह चौडौ राजू पांच है॥ मिलें होत छह तामे श्राघे लीजिऐ³, तिनकौ लंबे सात गुनें अव कीजिए ॥२४॥ तवे होत इकईस सवं सुनि मित जू, वंह्य स्वर्ग लीं अची गर्नी निचत जु। राजु साढे तीन ताहि इकईस ते. गुनि लीजे जैसे विधि सुनी मुनीस ते ॥२५॥ होत जु सत्तरि ऊपरि साढे तीन हैं, श्रैसे ही वुम्होतर ते गिनि लीन हैं। जो वधिघटि <sup>१</sup> कहि श्रायो<sup>२</sup> सो घटिवधि <sup>३</sup> गिनौं, राजू होय तिहैत्रि साढे सो भनौं ॥२६॥ दोऊ लेह मिलाय करो १ इकठे सर्व, होय ऐक<sup>्</sup>सौसैतालीस रजू जवै। तिन्हें ऐकसौछिनवें मांभि मिलाइऐ, रजु तीनसैतेतालीस वताइऐ ॥२७॥ तामें जीव भ्रनंत भरे यम मांनिएं.

ज्यों घट भरचौ घिरतसौं त्योंही जानिएं।

जांन-पनीं लिववो है केवल ग्यांन में,

श्री जिन भाषी सो कीजे सरघां नमें ॥२८॥ ताही के मधि त्रसनाड़ी जुकहात है,

अची चौदह राजू सबै विभात<sup>२</sup> है। लवी चौड़ी इक इक राजू ही कही, त्रस जीविन की याही मै उतपति सही ॥२६॥

२४ १ धरिल छ द। २ यक। ३ लीजिए। ४ गुनै। ५ कीजिए।

२५ १ गिनौ।

२६:१ घटिविघ। २ श्रायो । ३ Same as १। ४ तिहतरि।

२७:१करौ। २ एक।

२६:१ नाडी। २ विष्यात। ३ यक एक।

या विन लोकाकास मिद्ध जे े ठौर है,

तहां इकेंद्री ही उपजत निह श्रौर है।
लोकाकास ता्री विधि ऐसे जांनिएं,
गृथिन के श्रनुसारि कही सो मांनिएं।।३०।।

चौपई . परि यह लोक जु पुरवाकार, वात-वलय कै है भ्राधार। तिन के नांम ग्रादि सुनि ग्रवं, तीन वलय ते वेढचौ सर्वे ।।३१।। प्रथम घनोद्धि पवन कहात, गऊ-मूत्र सम वरन लषात। मोटो जोजन वीस हजार, सव पिरथीतिल वलयाकार ॥३२॥ दुतिय वलय घन ताकौं नांम, मुग वरन सोहै श्रभिरांम। श्रौर घनोदधि-सम लै जांनि, त्रितिय वलय तन नांम वर्षानि।। ३३।। पंच वरन है ताकी रंग, श्रीर सकल जांनी वह ढग। पिंड़<sup>२</sup> भयो<sup>3</sup> सव साठि हजार, वड़ा जोजनां मोटौ सार ॥३४॥ ऊपरि सिद्धषेत्र है जहां, इती मृटाई<sup>9</sup> जांनी तहां। वात घनोंदिष फुनि घनवात, चवहै सहस धनुष रे भ्रात ॥३४॥ त्रितिय वात तन घनुष प्रमांन, पंद्रहसंपिच्चेहतरि जांन। तिनमै सिद्धन के सिर लगे, इम भाषी गनधर गुन पगे।।३६॥ श्रव सुर्गाि मद्धिलोक-विस्तार°, दीप समुद्र श्रसंषि मुभार<sup>२</sup>। तिन मि जंबूदीप प्रधांन, ज्यौं सरीर मिध<sup>3</sup> नाभि प्रमांन ॥३७॥ गोल जानि तिह वलयाकार, चहु दिसि जोजन लक्ष प्रसार। मेर¹ सुदरसन ताके मद्धि, ऊचौ॰ जोजन लक्ष प्रसिद्धि ॥३८॥ ताकै दक्षरा उत्तर वीर, षट परवत जु परे मनु तीर। पूरव पछिम तिनके छोर, लवगोदिधमै परे द्वोर ॥३६॥ जिनते भऐ सात सुभ षेत, तिनकी नांम सुनौं करि हेत। भरतषेत्र<sup>९</sup> दक्षिए। दिसि जांनि, श्रैरावत ऊत्तर दिसि मांनि ॥४०॥

३०:१ जो।

३४:१वरए। २ पिड। ३ मयौ।

३४: १ मुटाइ।

३६:१ पिच्चेहत्तरि। २ तिनतै।

३७:१ विसतार। २ मद्गार। ३ विचि।

३८ १ मेर। २ ऊची।

३६:१ उतर ।

४०:१क्षेत्र।

हिमवत कह्यौ चौ गुर्गौं सोय, है रनि वत तिम उत्तर जोय। वेत्र जूहरि याते चौगुरगौ, रम्यक उत्तर दिसि फुनि सुर्गौ ।।४१।। वीचि विराजे षेत्र विदेह, चौसिठ गुर्गों ताहि गिरगि लेह<sup>र</sup>। भ्रव परवत के कहिऐ<sup>3</sup> नांम, हिमवन भरथ वोर भ्रभिरांम ॥४२॥ सिषरी ग्रेरावत दिसि लग्यी, महा हिमौंन दिषरा विसि पग्यी। रुकमी ऊत्तर दिसिकों होय, निषध भरय की वोर सु जोय॥४३॥ नील उतर दिसि ही की जानि, ऐ सब भूधर षेत्र प्रमांन। तिनके भाग ऐक सौ निवै, तामै भरथ भाग यक हिवै॥४४॥ जोजन पाच सै रु छुव्वीस, इक जोजनकी कला वनीस<sup>9</sup>। तिनमें कला लेहु षट कहै, भरथ भ्रैरावत परमित यहै ॥४५॥ भवि सुनि भरथ षेत्र की वात, बिचि विजयारध परचो विष्यात। तामै गुफा दोय तू जानि, तिनकी तरह सुनौ सुषदांनि ॥४६॥ हिमवन परवत परि द्रह देखि, पदम नांम तिह तनौ विसेषि। तिह तें या दिसि नदी दोय, गंगा सिघ नीकसी सोय ॥४७॥ गगा विजियारधकौँ भेदि, पूरव दिसि चाली विनि षेदि। दुतिय गुफा विजियारघ मांहि, सिंघु चली पच्छिम दिसि जाहि ॥४८॥ तिनते भरथ - षेत्रके माहि, षट षंड़ पड़े सु संसय नाहि। तिनमै षंड़ मलेछ जु पांच, श्रारज्य वड ऐक है सांच ॥४९॥ ताकै मिद्धि जांनि इक देस, नांम दुढाहर वसे विसेस। सरिता सरवर तामे धने , कूप वावड़ी सुंदर वने ॥५०॥ वृद्ध भ्रतेक जाति के भले, छहु रित में जे फूले फर्ले। तहा पुरी ग्रवावित वसै, ईंद्रपुरी हू तें भ्रति लसै॥५१॥

४२ १ गिनि । २ लेहु । ३ कहियतु ।

४३: १ दक्षिए।

४५. १ उनीस ।

४७ : १ सिन्धु ।

४६:१षडे। २पडे। ३ म्रारिज।

५०:१ ढुढाहर। २ सरता। ३ घने।

५१:१ वृद्धि ।

चहु विसि परवत वड़े ऊतंग , तिन परि षाई कोट सुचंग। मिद्धि पुरी के सुंदर भौंन, तिनमै वसै सुषी सव पींनि ॥५२॥ गिर परि महल भूप के बड़े, मांनौं सुर<sup>9</sup>-विमांन ऐ<sup>2</sup> षड़े। महलनंते गिर परि कछु दूरि, किल्ला ऐक वनायो सूरि।।५३।। नांम सवाई जैगढ दियौ, सूप सवाई जैस्यंघ कियौ। तामें सोहत महल सुवाग, तोप कोट परि है वह लाग।।५४।। राजी सबै पुरी के लोग, भूपिन-तरगी नीति-संजोग। ईति भीति नहि ब्यापत जहां, दुषी न दीसै कोऊ तहां ।। ४५।। तहां भऐ कछवाहे, छत्री मूप।

छंद वरवे : तिनकी कीरति जग मै, अधिक अनुप ॥५६॥

## नृप वंस वर्नन

वडे वंस श्रीरांम के, कछवाहे दल साजि। दोहा : **ष्राऐ नरवर ते कियो, देस दुढाह**ड़ राज ॥५७॥ प्रथम राज काकिल कियो, माचि मवासे तोडि। वचे भोमिया ते सबै, मिले श्राप कर जोडि।।५६।। तिनकै पाटि हर्गू नृपति, भऐ मनौं हनुमांन। वहरर्ची जानड़दे भऐ, तिनके पाटि सू जांन।।५६।। फुनि पज्जवरा भऐ नृपति, महावली सांमंत। तिनकौ वल जस प्राकरम, वह कविजन वरनंत।।६०।।

सोरठा : भऐ मलेसी भूप, ग्यारह से इक्यांवनै । कीन्हों राज अनुप, वैठि पुरी श्रंवावती।।६१।। फुनि वीसल भूपाल, राज कियौ वह <sup>9</sup> सेन सजि । तिनकै पाटि विसाल, राजे राजा राजदे ॥६२॥

५२:१ चहुं। २ उतंग।

५३:१स्वर। २ए। ३ कछ।

५५ १ इति।

५६: १ षित्री।

५६:१ हरा।

६१: १ only इ the rest damaged.

६२: १ ends damaged the word thus lost

फुनि नृप केल्ह्ए। नांम,वहुरधों कूतिल नृप भऐ । तिनके गढ़ श्रभिराम, श्रवलों सोभित हैं श्रगट ॥६३॥ फुनि जोंग्सो महीप, तिनके पाटि भऐ नृपति । उदेकरए। श्रवनीप, तिनके पटि नरस्यघ हुव ॥६४॥ भऐ भूप वरावीर, तिनके पट उघरए। उऐ । तिनके पटि धरधीर, चंद्रसेिए। हुव चद्रसम ॥६४॥ तिनके पटि भूपाल, प्रथ्वीराज उद्यौत किय। सव दुरजन के साल, भऐ प्रजापालन निमित ॥६६॥ द्वारावित की छाप, म्हाघरम ध्वज भूप के । जोगी-तर्ण मिलाप, घर वैठां ही ऊ घडी ॥६७॥ तिनके वारह पुत्र, भऐ महावल प्राक्रमी। जीति लऐ सह सत्रु, वांघी वारह कोटडी ॥६८॥

प्रथीराज के पाटि भारमल वैठ्यों प्रति सोहै।

तिनके पिट भगवंतदास हुव ता सम ग्रीर न को है॥

जिनके पुत्र भऐ जग मै नृप मानस्यंघ ग्रवतारी।

तिन दिल्लीपित पातसाहिकी सवही वात सुघारी॥६६॥

पूरव पिछम दक्षिगा ऊतर च्यारची दिसि पजाई ।

लें ले जीति सूमि सूपिन की दिल्ली तले लगाई ॥

सवही मुलक माहि जिनको जस ग्रवली नर तिय गावे।

तिनकी सपित साहँ सुभटनु को जसु कछुक सुनांवे॥७०॥

छद

६३ १ कूतिल । २ मये। ३ है।

६४ १ पाटि ।

६५ १ जिनकी। २ पटि। ३ मए।

६६ १ प्रथीराज।

६७ १ महाधम्म ।

६८ १लिये, B includes two additional Dohas and the verse order changes accordingly

दोहा—प्रथीराज नृप जांम, पूररामल मीवों रतन ।
कियो राज परिनाम, कारगा किवन ना घरचौ ।।६६॥
ग्रासकरण इक पुत्र, दौरि जाय पतिसाहियें।
नलवर राज पवित्र, लैकें कीयौ जीति षेतु ॥७०॥

६६ १ मैठो । २ जिन्हक । ३पातिसाहि।

७० १ दक्षिन । २ उत्तर । ३ पै जाई । ४ झब लौं । ५ साहसा । ६ सुमटन ।

Γ

किन्त जेतक विलायत में ऐक उमराव ता कें,

श्रिन्योक ने तिती वीचि पांडवन मांडचौ कुरषेत है।

कहै 'किव गंगधर' श्रांगन की जैसौ लेषो,

तैसे कीन्हें सात हैं समुद्र सरासेत है॥

ऐती भूमि का के भई कौंने पातसाहि लई,

जेती यह पातसाहि लई श्रर लेत है।

मेरे जांनि राजा मांन तोरि तोरि श्रासमान,

जोरि जोरि जमीतें जलांलदी कीं देत है॥ ७१॥

पुन कवित्त : काहू के करम पातसाही उमराई राई, काह के करम राज-राजनिकी नेत है। काह के करम हय हाथी परगर्ने पुर, काह के करम हेम हीरिन की केत है॥ हरि हरि कोई जोई जाही कै लिलाट लीक, सोई सोई श्रांनि इँह दरवारि लेत है। क्रम नरिंद मांनस्यंघ महाराजा, तेरे करके भरोसे करतार<sup>3</sup> लिघि देत है ॥७२॥ पीछे तों न होयगी जुगति यह जांनियत, कीन्हों जब सेत रांम हेत जाको नल है। कूरम नरिंद पुरवारथ की सीम सुनैं, जाके भुजदंडिन मै भीमको सौ वल<sup>3</sup> है॥ पूरव की वोर छित छोर लौं विरचि वीर, काटि काढ्यी श्रमित पठाननि की दल है। लोह भरचो षरग पषारचौ मांनस्यंघ, भयौ तव तं सुषारी मनीं सागर की जल है ॥७३॥

७१: १ श्रन्योक्ति । २ जेतिक । ३ एक । ४ उमराय । ५ श्रकवर । ७२: १ हर । २ दरवार । ३ करतारु । ७३: १ होयगो । २ मीमको सो । ३ वल । ४ षडग । ५ मानो ।

The author means that this couplet has been composed by some one else The word has nothing to do with अन्योदित alankara.

छप्पे : फनक-कलस सञ्जिऐ<sup>9</sup>, नगर मंडिऐ<sup>2</sup> विविधि विधि। पदिमानि यम पिष्यिऐ<sup>3</sup>, उदित भई मनहुँ नऊं निधि॥ नारी मन मुदित, हरिष मुख मंगल गांवहि। कहै, सोई दिछ्छन श्रावहि<sup>४</sup>॥ थप्यो लंकेस इम सिंघु सकुचि पैड़ो<sup>४</sup> कियौ, जो न सीसे पथ्थर<sup>६</sup> तिरै। रघुवंस श्रंस नृप मांन सुनि, भम्भीषन फूल्यौ॰ फिरै ॥७४॥

तेग मांन की मांहि, ग्रगनि श्रनीषी नीकलै। सोरठा ३ त्रए वाला विच जाहि, जलबाळा जिल जिल मरै ॥७५॥

दोहा १: मांनस्यघ नृप के भएं , जगतस्यघ सुकमार। कांगड़ा³, तोडत४ लगी न वार ॥७६॥ वालपने गढ काला माठा त्री, रज विन रजपुतांह। जगतं मान नरिंद-रें<sup>3</sup>, श्राघ<sup>४</sup> कियौ ऐतांह ॥७७॥ भऐ° कवर जगतेस के, महास्यंघ सिरताज। लघु सुत सूपित मान<sup>ः</sup> कौ<sup>३</sup>, भावस्यंघ किय राज ॥७८॥ बहुरि भऐ महास्यंघ के, सुत नृप जयस्यंघ नांम। दक्षिरा दिसि जीतन चढे, मनह लंककौँ रांम ॥७६॥

तिलंग हुव भस्म श्रस्म १ छप्पे : वर फड़िव। श्रफजल द्रावड़ी दवद्भिव ।। वंगलांन नद घूमि घूम³ घर४ मड़ल मछ्छव<sup>४</sup>। मुग महीप घन कोन लङ्कर जिम डिंदूव ।। ष्मांन षांन घिरत

२ मिडिए। ३ पिष्विए। ४ ग्राविह। ५ पैडो । ६ पत्थर। ७४` १ सङ्गिए । द फिरै। ७ फुझयौ ।

१ झागि । २ त्रिए। ७४

२ मए। ३ कागरा। ४ तोडत। १ दौहा । ३७

२ विनि। ३ कै। ४ स्राघ । ७७: १ माठा ।

२ मान। ३ कै। १ भए। 95

७६: १ जीतए। २ मनीं।

३ घूम । ४ घुर । ५ महिव । ६ डट्टिव । २ ^ दबहिष । ८० : १ missing ।

<sup>†</sup>The defeated foes holding grass in the mouth.

The envious.

<sup>\*</sup>The famous temple of 'Jagat-Shiromani' at Amber is assigned to Prince Jagat Singh who died during the life-time of his father.

सिव सिघ भ्रम्य जम्मी भ्रवनि, यम जगत्त जारन लयव। वल दलति जलद जयसाहि-दल, निह पिष्विय कब बुिक गयव ॥५०॥

फौजन<sup>२</sup> ते श्रापन दवाय राषी दसीं दिसि, कवित्त श्चांकि : श्ररनिकौं राषी न निसानी कहं हिरकी। साहि के सुभट जयस्यंघ गिर मेर गुर, गाहि गाहि गाही ठौर राषी न गुमर की॥ कीनों वोल ऊपर प्रताप दीन ह पर, सु-मूप ते पांच राषी मूपनि के सिर की। थर थर थार को<sup>3</sup> सौ पारौ थहरात<sup>४</sup> ही<sup>†</sup>, स्र तैही लिंग थांभ पातसाही श्यांभि थिर की ॥८१॥

भऐ भूप जयस्यंघ कै, रांमस्यघ महाराज। दोहा : तिनके संगि सदा रहे, कविजन; सुभट समाज ॥ ५२॥

#### प्रताप वर्नन

किलकत काली जुग्गनिन के जसन होत, कवित्तः 'सुकवि घुरंघर' जमाति जुरै देवी की। श्रीर हं कहां लों कहीं दौरे रांम कूरम की, दिवगे दिगज देव-दांनव न ऐवी की ॥ घसकी घरनि डाढ मसकी ड्ढायर की<sup>४</sup>, कसकी कमठ-पीठि<sup>१</sup> रसम रकेवी की। दिगा-दल भारकै दवाऐं वे-सम्हार ह्वं भयौ भांति सिमिट भुजगम जलेवी की ॥८३॥

भऐ रांम नृप के कवर, किसनस्यंघ जिम भांन। दौहा ? : तिनके तेज कृपान<sup>3</sup> कीं, जानत सकल जिहांन ॥८४॥

८०: 🔑 स्यंघ। ८ Aदलिति। ६ Aफव बुङ्मि ।

८१: ध्रन्यौक्ति। २ फोजन। ३ को। ४ थेंहरात। ५ पातिसाही।

प्र : १ मए। २ तिनकै।

पर्वः १ कं। २ दोर। ३ एवी। ४ डठायरकी। ५ पीठि।

पर : १ दौहा does not occur in A । २ मए। ३ क्रपान।

țc f Bhusan 'थारा पर पारा पारावार यों हलत है' (Shiva-Bavani) ‡Kulapati Misra was a Court-poet of Ram Singh \*The convex back of the mythological crab became concave like a dish.

कवरपर्दं किसनेस के, विसनस्यंघ हुव पुत्र। राज कियौ श्रवावती, जीति सकल पल सत्रु॥८४॥

জিন जट्टन प्रल्ली हुसैन भल्ली विधि छप्पे श्रन्योक्त<sup>9</sup> : जिन जट्टन सफीषांन नद वह भातः श्रहद्रिव ॥ जिन मैहरावषांन-गुंमांन जट्टन गुमायौ । जद्रन मुकरब्विषांन कुट्टि कर षिलायौ ॥ 'कवि राम' वहादरषांन सौ, जंग जुट्टि वसु लुट्टि लियै। नुप विसनस्यघ सोइ॰ तेग वर, जट्ट थट्ट दहवट्ट<sup>८</sup> लिय ॥८६॥

दोहा : विसनस्यघ नुपके भऐः, श्री जयस्यंघ नरिंद।
तिनहि सवाई पद दयौ. दिल्ली सुरपति हिंद ॥८७॥
संगि लिऐः चतुरंग दल, रथ पायक गज वाजि।
कूरम श्री जयस्यघ नृप, चढे गढौं पे साजि॥८८॥

छद मुजग प्रयात : गढौं पे चढे भूप वालापने भै, विसा दक्षिणी परवतों के गने भैं। किला तोरि के षेलना षेलना से, मनों वालकों ने किए हैं तमासे ॥ प्रधाल से सेंद वे दौरिक सांभरी भै, मिलाये जमों सें तिनेहं घरी में। भिरे साहिजादे भयो जंग भारी, सहां भूपहू कोपि कीन्हों सवारी॥ ६०॥

८६. १ श्रन्योक्ति । २ माति । ३ गुम्मांन । ४ गमायौ । ५ कुट्ट । ६ ^िकय । ७ सोई । ५ देह बट्ट ।

८७ १ दौहा। २ मए।

८८ १ लियें।

८६ १ बालापनें। २ गर्ने। ३ वेलना। ४ नै। ५ किये।

६० १ मिलाए। २ कींनी।

<sup>†</sup>Fort of Khelana or Vishalgarh on the crest of the Sahyadri hills in the Deccan. It is said that the title "Sawai" was conferred upon Jai Singh, when hardly sixteen, by the Emperor Aurangzeb in recognition of his personal qualities shown by him during the Khelana campaign (A.D 1702)

चलाऐ घने वांन श्राकास छाऐ,
तमासे घनें जोगिनी जक्ष श्राऐ।
कियो जुद्ध भारी घनें सत्रु मारे,
वचे जे तिनोंनें तिने दत धारे ॥६१॥
वड़े भूप भू में हुते मारवारी,
तिन्हों पै चढ़ी कोषि के फौज सारी।
लगे पाय वे छांडिकं राजधांनी,
चहुं चक्क ने भूप की श्रांन मांनी॥६२॥

दोहा : मांनी श्रांन सर्व नृपति, श्राऐ श्रधिक उमंगि। पाय लागि विनती करी, हमें राषिऐ संगि॥६३॥

वांन वर्नन (भ्र०१) ॥

किन्त : कूरम निरंद जयसाहि वाहैं परकें,

सु पार होत पल मैं सहज सूकी परकें।

चलत सलूक चुकुटी के फ्रीर कर कें,

सुवकतर टोप करी काच जिम करकें॥

'सूरिज' भनत करें घाव जाही धर-कें,

सु वाकी हिया नेक वेर दोय-तीन घरकें।

मालिम जगत मैं लगत जाही सर-कें,

सु हाथी पैड़ पाच सात पाछे पाय सरकें॥६४॥

कवित्त ः कोप करि कूरम सवाई जयस्यंघ नृप, चढ्यो जोघपुरवारे श्रभैस्यंघ मारू पर । फौजन की गरद न दोसे भांन - मंडलहू, सिंघ सुकि गऐ को गनत नदी नारे सर ।।

६१: १ वाए। २ तमासे। ३ घर्ने। ४ जे जिन्हींनै।

६२: १ छाडिवे।

६३: १ दौहा।

६४: १ missing । २ चिकटो । ३ जिमि । ४ सूरज । ५ जांही । ६५: १ फबिल, missing in A । २ मारू । ३ मानु । ४ सिंघु ।

<sup>†</sup>cf. Ms no 4287 in the Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur collection.

दसौं दिगपालन हूं दातन शतनौंका धरे, सुरपुर नागपुर दौरे° जात दरवर। दहसत्ति<sup>६</sup> षाय रजपूतन की वांह<sup>६</sup> छांह<sup>९०</sup>, स्राय मिलि ड़ांड़<sup>११</sup> भरि वच्यौ नाथ मुरघर ॥६५॥ जंग सुलताने जहा<sup>९</sup> पूरव परव पाय, श्ररव षरव दल जोरे पर दोह पैं। 'सूरिज' भनत तहां श्रागे भयो जयसाहि, सिंधुर ठिलत यौं पिलत लोह लोह पैं॥ गिद्धि<sup>र</sup> सिधि<sup>६</sup> सध्यन ग्रघांनों स्यंभू मध्यन<sup>७</sup>, सुवीर निज हण्यन चलावे तीर छोह पै। मंडल कमांन के वितुंड पे लसत मनीं, अग्यो<sup>६</sup> है प्रचंड मारतंड विधु<sup>१</sup> कोह पै ॥६६॥

#### नगर उतपति<sup>5</sup> वरनन<sup>3</sup>

नगर वसायौ यक नयौ. जयस्यघ सवाई. दोहा ३ छद निसानी : जाकी सोभा जगत में, दसहों दिसि छाई। ताकौ वरनन करनकौ, हुलसी मति मेरी, जानियों, ताकी है चेरी ॥६७॥ इंद्रपुरी ह

कूरम सवाई जयस्यंघ भूप सिरोमनि, कवित्त सुजस प्रताप जाकी जगत मैं छायी है। करन-सौ दानी पांडवन-सौ क्रपांनी महा, मांनी मरजाद मेर रांम-सौ सहायौ है॥ सोहै प्रवावति की दक्षिए। दिस सांगानेरि, दोऊ वीचि सहरू ध्रनौपम वसायो है। ताकी घरची है स्वाई जयपुर, मांनीं सुरिन हीं मिलि सुरपुर-सौ रचायो है ॥६८॥ °

ह्य : प्रदातन । ६ तिनूका । ७ दोरे । ८ वहसित । ६ वाह । १० छाह । ११ वाड । हुद्दे : १ तहा। २ ^ दोहैपै। ३ जहां। ४ मर्यो। ५ गिथि। ६ सिद्धि।

७ मत्यन । ६ हत्येन । ६ उग्यो । १० विधु ।

१७: १ उत्पत्ति । २ वर्नन् । २ missing । १८: १ ताको । २ छायो । ३ दक्षण् । ४ म्रनोपम । ५ सवाई । ६ ही ।

७ ॥१००॥ ।

च्यारचौ दिसि रच्यी उतंग इंद पद्धरी : कगुरिन की वनी जोट । तापरि चौड़ी षाई तलि तिह वनाय³. सरिता जाय ॥६६॥ श्रौडी चली मनु वर्ने २ गोष. ऋचे ° टरवाजे पौरिया तिह<sup>3</sup> जौष । वैठि करत कीन्हे 충 चौपरि+ के वजार, वीचि वनाऐ४ चौक विचि चार ॥१००॥ नहैरि<sup>‡</sup> वाजार विचि में ववे रषांहि । गहरे रचे, गंभीर, चौकनि मै क्ंड तिनकौं मिष्ट नीर ॥१०१॥ जग पीवत हाटिन विचि रस्ता १ के रषाय, ते सुघे चले जाय। हवैली वने कुप वह वाग, सुंदर तिनु लिष मन लगत लाग।।१०२।। व्यौपारी कितेक. धनवांन ল सुदेसनि ते श्राऐ श्रनेक । विराज भ्रति निसक होय, ते करत परदेस

सुदेसिह

गोठि

साहकार

में

जात

घनाढि

करे

कीय ।।१०३॥

मित.

नचित ।

मिलि

वागित

६६ ! १ च्यारघों । २ कंगुरनि । ३ पनाय।

२ वडे । ३ तेंह । ४ बनाए । १००: १ अचे।

१०१: १ ल्याए।

१०२: १ रसता। २ दीन्हें।

<sup>&#</sup>x27;१०३: १ बहु देसनि ते ल्याए श्रनेक। २ निसँक।

fin accordance with the Hindu tradition of town-planning i, e, two wide streets run through the city intersecting at right angles,

<sup>‡</sup>This canal was brought from नाला श्रमानीशाह in the west of the new city— नायावतों का इतिहास, हनुमान शर्मा p. 166.

या विधि सौँ भुष विसि दिन वितात, देवन वसमान नर तिय लसात ॥१०४॥

छद ' स्राऐ निज्मभी जोतिगी, वहुरघों फिरगी कौतिगी।
तिन रच्यो जंत्र विसाल है, तामैं ग्रहों की चाल है।।१०५।।
तिथिपत्र मिल ठान्यों नयों, सिरिनांम सूपित को दयो।
सो 'जयिवनोद' कहात हैं , जग मांहि सो विष्यात है।।१०६।।
वहु विप्रि विद्यावांन ते, श्राऐ दिसा-विदिसान तें।
साहित्य तर्क सु न्याय के, पाठी प्रवीन सुभाय के।।१०७।।
मिलि बैठि वे चरचा करें , 'वांनी सुरिन की '' उच्चरें ।
वोले सु श्रधिक मरोर सौं, वहु जोर किर के सोर सौं।।१०६।।
सुनि सूप चरचा तिन-तनी , हिय हरिष के किव गुनी।
घव देत तिनिह श्रपार हैं , श्रैसी अनेक सभा रहें ।।१०६।।
भाषा कवी परवीन ते, जस करत नव प्राचीन ते।
वारहट माट सुभावते, वहु पढत किव चित चावतें।।११०।।
गज वाजि घन सिरपाव ते, वकसीस लिह गुन गावते।
विचरें सु पर ह देसते, श्रासिषा देत हमेस ते।।१११।।

१०४: १ सुष । २ सौं । ३ देवनि ।

१०५ : १ गृहीं ।

१०६ १श्री। २है।

१०७ : १ दिसांनि । २ ते ।

१०८ १ करे। २ उच्चरे।

१०६ १ हैं। २ रहें।

<sup>†</sup>Astrologers Najum (Astrology) in Persian Ancient Hindu Kings kept astrologers at their court. Astrology was a favourite subject among the Muslim Sultans also who had full faith in the Heavenly bodies.

<sup>†</sup>Universally accorded to Europeans (the Franks) in India it has a perjudicial significance but not everywhere.

<sup>\*</sup>Calendar

<sup>††</sup>Sanskrit

<sup>‡‡</sup>Mark the use of genitive तनी ।

<sup>\*\*</sup>The obstinate family Charana who won't yield till his reward is obtained by him i e he dose 既已 表記 i

<sup>→</sup>A family bard. A 'Bhat' is different from a 'Charana' in that his यजमानmay be a non-Rajput also while a Charana accepts the patronage of a Rajput गढ़पति only.

छंद पद्धरी :

विधि के कारीगर सहित परिवार बुलवाय पूर मै दीन्हे ? सवकों कराय ॥११२॥ माफी सुजस वढ्यौ चहुधां यह जन तिनकी न श्राऐ वह श्रत। करन लागे वह भातिन के करि करि विवेक ।।११३।। महर‡ रुपैया े लेत देत, विकत सुवरन वहूरि वस्त्र पाटके तनसुषेत\* ॥११४॥ षासा 3 फूनि विकत पसमींना कह<sup>र</sup> विकत किराने<sup>3</sup> वहरि धांन। लिएं कसेरा घात पात्र४, नहि भूठ तिनमै मात्र ॥११५॥ वेलि गंधी कहं श्रत्तर फुलवा फुलेल। मिस्सी †† हलवाईगर विशक ज् मिठाई करि श्रवूप ।।११६॥ वेचत

११२: १ तिन्हकों। २ दीन्हें।

११३: १ मांतिनु ।

११४ १ <sup>^</sup> रुपैया। २ मैहमूदी। ३ षासे।

११५ १ पांन । २ कहा ३ किरानें। ४ पंत्र ।

११६. १ कहु। २ रूप।

<sup>†</sup>Taxes in general

<sup>‡</sup>Gold coin bearing the seal of the Maharaja.

<sup>\*</sup>All the three varieties find a mention in 'Ain-i-Akbari' of Abul Fazi. (Ain 32)—Blochmann & jarrett.

<sup>††</sup>A powder made of vitroil with which women blacken the space between their teeth High class ladies, used antimony for darkening their eye lashes. See Jayasi's description

<sup>&</sup>quot;छोरहु जटा, फुलायत लेहू, भारहु केस, मकुट सिर देह ।

काढ़हु कथा चिरकुट-लावा, पहिरहु राता दगल सोहावा ॥" (Ratansen-Padmavati khand)

मेवा परदेस सुदेस के वह लेत देत करि करि मजेज। वरात पारिचा जरीवाव, म्रति गर्व भरे निह देत जाव ॥११७॥ जरदोज! कहूं सीवत वितान', सिरपावन के वह वख-थांन। रगरेज रँगत कहूं पट सुरग², लहरिया जु वांधत करि उमंग।।११८।। कहं षत्री ' छीपे चूनरोन, पोमचे<sup>††</sup> वांघि वेचत प्रवीन । कहुं चूरा‡ चित्रत है चतेर<sup>9\*\*</sup>, तिनकीं लघेर ।।११६।। कहू वेचत है वह वसे म्राय कें सिल्पकार, वह भातिन के घड़ि संग सार। ध्रोर मंदिर म्रादि, देहरे जु तिनके लावत करि सिल्प यादि।।१२०।। कहु वेजारी में बहु व्यौत साजि, काजि। ते चुनत चुनांवहार<sup>9</sup> कहु वड़त वडेरे धौंस राति रं, घन श्रावत मनु वादर# वुलात ॥१२१॥

```
११८. १ बितान । २ स्वरग।
```

११६ १ चितेर।

१२० : १ के। २ सिलपकार।

१२१: १ चुना। २ कहु। ३ घडता ४ ^ चतेरे।

<sup>†</sup>Embroidery

<sup>‡</sup>Gold embroidery

<sup>\*</sup>Full-dress.

ffLadle's scarf.

<sup>‡‡</sup>Bangles.

<sup>\*\*</sup>Painter.

<sup>+</sup>Masons [चेजारी ?]

<sup>++</sup>Day and night. 13

<sup>#</sup>Frogs,

कहं रतन-जड़ित जड़िया सुनार, मूलमची† चेगड़ी<sup>‡</sup> सिकलगार\*। वुनगर वरक वस्मागर साज, वेचत गुड़ी । पतंगवाज ।।१२२।। कह कलार‡‡ लोहे काछी लुहार, कहुं जीन रचें भंवार। मोची वर्ड पिरजापति । श्रीद श्रीर, व्यौपारी फुन कसवी करोर ॥१२३॥ वाह्यरा घ्रर वैस्य सूद्र, छत्री च्यारि ह<sup>ु</sup> वरग के गुरा-समुद्र। सुखी सुर सायर प्रवीन, सव वहु चतुर वसे तिनमें न दीन।।१२४।। वह-मोल सु कोमल वख श्रंग, भूषन मिए-जटित सुवर्गा नर लसत मनौं सुर<sup>९</sup> वसे श्राय ।।१२५।। नारी सुंदर श्रति चतुर चार, भीनें पट भूषराजुत सिंगार।

१२२: १ जडत। २ जिंडया।

१२३: १ रचे । २ परिजापति ।

१२४: १ होँ।

१२५ : १ स्वर।

An undated Malthili song refers to kite (गुड्डी) thus .

"गुड्डी उडै श्राकाश मे, नागा हमरा पास मे ।"

<sup>†</sup>An artisan expert in silver or zinc plating.

<sup>‡</sup>Sk चैकटिक A diamond cutter.

<sup>\*</sup>An artisan who sharpens the blades

<sup>††</sup>cf, Bihari Satsal. "उडी गुडी लिख ललन की, श्रगना श्रगन माह । वौरी लो दौरी फिरत, ब्छुवित छवीली खाँह ॥३४॥"

<sup>‡‡</sup>Wine-seller.

<sup>\*\*</sup>A potter.

<sup>+</sup>Embroidery.

<sup>++</sup>Clad in fine clothes.

स्कूमार स्वकिय पिय मन हरत, देवांगना ? न समता करंत ।।१२६॥ पुर-छोर<sup>†</sup> वशी वारांगनां<sup>‡</sup> सू, वहु करत नांच मनु श्रपछरा सु। लिष सुनि संगीत-गांन, तिनकौ वह वेत रसिक जन रीभि दांन।।१२७।। संपति वयांन, श्रव सुनहु भूप कछू क मोमति प्रमांत। वरनीं यक हतौ वाग तिँह है जै-निवास, नृप रच्यौ वड़े जयस्यंघ तास ॥१२८॥ लिष नंदन-वन लजात, जल-जंत्र फुहारे वहु छुटात । तिनते ग्रीषम<sup>9</sup> की मिटत भार, विन समै होत पावस वहार ॥१२६॥ हैं भ्रनेक पादप मधि रसाल, नूत वत्रतनी तमाल। कहु १ वकुल४ फेलि फ्रांजीर बेर, कहु³ सेव नासपाती नरेर ॥१३०॥ कह पीपलि पारिजात कह लवग, विदांम पिस्ता केसरि सुरंग । कहु पनस पुंगिर महूवा श्ररिष्ट, कपिण्थ<sup>3</sup> दाड़िम सुमिष्ट ।।१३१।। गूलर

१२६: १ देवागना।

१२८ . १ इक । २ तेंह।

१२६: १ ग्रीषम ।

१३०: १ कहु। २ त्ता ३ कहु। ४ वकूल।

१३१ १ थीपरि । २ पंग । ३ कपित्य ।

<sup>†</sup>At the extremity of the city walls

<sup>‡</sup> Prostitutes

<sup>\*</sup>Mirza Raja jai Singh (b. 1611-d 1667 AD.)

<sup>††</sup>Mark the 'yamak' here.

कहुं ताल हिताल सु वीजपूर, भल्लात-वेलि परवर षिजूर । कहं श्रांमिलवेत जमूनि निव, कररणा नारिंग सु पक्क विव ।।१३२।। श्रभया विभीति<sup>१</sup> श्रामिल छुहांर, कह दाष ईष ऐला अपार। जाती फुलन्यौज<sup>3</sup> जभीर वोट, सीताफल मीठे हैं षरोट ॥१३३॥ वहु फूले वृछ<sup>९</sup> श्रनेक जाति, करुणा केतगी कदंब-पांति। केवरा कुंद चंपा गुलाब, मचकुंद सेवती मोगराव ।।१३४।। कहू गुल व गुला फूल्यो नवीन, कहु कुसम फिरंगी गुल श्रचीन। गुललाला दाऊदी हजार, कहु गुलहवास रंग वहु प्रकार ।।१३५।। चंदन श्रसोक कहु कोविदार, वंधूक वहुरि सिगार-हार। ईह<sup>२</sup> विघि फूले वहुवुछ<sup>3</sup> वेलि, तिन मांहि भूमर मन करत केलि।।१३६॥

श्रिरिल सीतल मंद सुगंध पौंन सचु पायकें, श्रिन्योक्तिः सघन छांह मै वैठि विहगम श्रायके। नेन मूंदि श्रिति चैन भरे श्रव रेषिऐ, मनौं महा मुनि लीन बृह्यमय देषिऐ।।१३७॥

१३२: १ षजूर।

१३३ १ विभीत । २ एला । ३ फलन्यौं।

१३४: १ विछ ।

१३४: १ बु। २ श्रद।

१३६: १ कहु। २ इहा ३ इद्या

१३७: १ श्ररिल only.

विरह-वेदना कहत मनौं पिक टेरिक, सुनत भौर हंकार देत मन फेरिक। तर-वेलनि के रहे फूल-फलभूलि वे,

देवत सुर नर ग्रात-जात मग भूलि वे ॥१३८॥ वहुरि ताल यक तालकटौरा है तरे,

मनौं सरोवर मान देषि छवि कौं हरै।

वहुरि सवाई जयसागर यह नाम है,

ताकी तीरन सुभटादिक के घांम है ॥१३६॥ विमल नीर तं भरे लखे ग्रांनद हुं,

पछी-गन तहँ विहरत श्राय सुछंद ह्वै।

चक्रवाक चातिक चकोर चहु देखिऐ,

कहूं कपोत कलहंस कोकिला पेषिये ॥१४०॥ कहं मोर नाचत छत्री करि चावसौं,

कहु सारिस कहुं बुग ठाढे इक पाव सौं। कहं बैठि कलवक संक तजि रति करे,

कहु ट्टिट्टिभि कुकटनु श्रादि वहू षग् तिरें ॥१४१॥ कहं करत नर कांमिनि श्राय सनांन कीं,

मनौं सुरसुरी श्राए छाड़ि विमान कौं। वहुरि मांनसागर यक दीरघ ताल है, तामें सरिता मिली सु श्रति सोभा लहै ॥१४२॥

या विधि कछु सछेप से, दरने सरवर वाग। दोहा १ म्रव नृप मदिर वर्न<sup>३</sup> फछु, सुनिऐ करि म्रनुराग ॥१४३॥

लिष वाग सघन ग्रदभुत निरंद, छंद पद्धरी : वनवाऐ ता मधि महल-वृंदे ।

१ इक्। २ इह। ३ तीरिन।

१३६ १ इक । १४० १ चातिग ।

१ स्वर-स्वरी। २ छाडि।

१४३. १ दौहा। २ संबेप। ३ वरन।

१४४ : १ ब्रिंब ।

सत्वरोशे कलस स्वर्ण व उतंग, तिना४ परि ध्वज फहरत<sup>१</sup> पंचरंग<sup>‡</sup> ॥१४४॥ श्रांगन फेट्रिक स मलै पषांन, मनु रचे विरंचिजु करि सयांन। श्राव सलिल सम तिह वनाय, ्रपाट परत प्रतिविव श्राय ॥१४५॥ मिंग-कचन-जिंट मधि करी भीति, दति लषी परत लिष के पछोति । जँह कनक-पाट दीने<sup>9</sup> कपाट, जटि विडूर सोपांन वाट ॥१४६॥ मिरा-षचित षंभ मधि जगमगात. मनु रतन-सांन वहु विधि लसात। रची चित्रसाली<sup>९</sup> विसाल, रमत तँह सहित वाल ॥१४७॥ राजिद्र<sup>२</sup> मिरा-मंदिर मांहि तिय दुजी लिष प्यारी रिसाय । तव मांनवती लिष पिय हँसाय , जोरि २ लेहैं<sup>3</sup> मनाय ॥१४८॥ मिंग-जिंदत कुंभ स्रति जगमगांहि, वह भरे सुव्व<sup>9</sup> जल ते लसांहि। दिध - दूव - धूप - जूत - हेम सार -, सोहत श्रंतहपुर द्वार द्वार ॥१४६॥

१४४: २ सतषर्णे । ३ कंचन । ४ तिन । ५ फैहरत ।

१४५ : १ दे।

१४६: १ दीन्हें।

१४७ । १ चित्रसारी । २ राजेंद्र।

१४८: १ रिसाइ। २ हसाय। ३ लैहें।

१४६.१ सुद्धा २ थार।

<sup>†</sup>The poet refers to the Chandra Mahai Palace, the following are the names of the seven storeys, Chandra Mahai, Pritam Niwas, Sukh Niwas, Shobha Niwas, Chabi Niwas, Sri Niwas and the Mukut-Mahai.

The royal banner of the Kacchawaha Rajputs of Amber.

<sup>\*</sup>Sk. वेदुर्य ।

प्रीतम<sup>9</sup>-निवास फुनि सुष निवास, वैठक वीवांन सभा-निवास । फुनि चंद्र-महल<sup>६</sup> श्रादि जु श्रवास, कवि करें कहां लो वरन तास ॥१५०॥ दरवाजे वाट, सुगम कंचन-सम जटित वने कपाट। लगते वनवाऐ चौक ईस, रहें कारषांने छतीस ॥१५१॥ यह द्वा कारषाने त नींसा, पारसी<sup>‡</sup> नांम ता मद्धि वोस । नृप काढि हिंदवी नांम कीन, गृह-संग्या यह ठांनी नवीन ॥१५२॥ गज-ग्रह मैं गज मद भर लसात, हू तिनु लिष श्रेरावत लजात । में ते लैंके पहार, सुंडिन फैकत है पारावार<sup>††</sup> पार ॥१५३॥ वह ग्रस्व-साल मधि है तुरग, राजत है सुंदर भ्रति उतग। फेरत'र के विनु मैं फिरै सु, मन<sup>3</sup> पवनहु ते श्राघे कर्ढे सु॥१५४॥ फुनि रतन-गृहै ग्रह धन-भंडार, तिनके वरनन की है न पार, थ्रादि ग्रहै<sup>१</sup> जो हैं समस्त, भरि पूरि रही तिन मांहि वस्त ॥१५५॥

4 , 1

१५० १ प्रीतिम । २ महैल ।

१५२: १ यह । २ कारवाने ।

१५४: १ प्रश्वसाल । २ जे। ३ मनु।

१५५ १ Aग्रहै।

tin as much as,

<sup>&</sup>lt;u>†</u>Persian.

<sup>\*</sup>Nomenclature

छ्द : मत्री घने वृधिवांन है , जाने जिन्हें सु जिहांन है।
सोंप्यो तिन्हें नृप भार कों, हक देत -है हकदार कों ॥१५६॥
श्रंगी श्रनेक षवास ते, श्रित चतुर गिनत उसास ते।
वहु कांम के वहु भांति के, संपति सहित सुभ कांति के ॥१५७॥
वहु सुभट सिज श्रावे जहां, वेठं सभा मिध नृप तहां।
जैसे हुकम भूपति करें, तैसे करें नांही टरें॥१५८॥
इन श्रादि चाकर हैं जिते, हक पाय राजी ह्वं तिते।
प्रभु-भक्ति करि जस गात हैं, सुष माहि द्योंस वितात हैं॥१५६॥

दोहा: पाचौँ विधिजुत राज परि, राजत कूरम भान। रैति<sup>‡</sup> सुषी भडार वहु, नीति सु दांन क्रपांन ॥१६०॥

चहधा पुर<sup>9</sup> के गिर है उतंग, छ द पद्धरी . तिनपे गढ बनवाऐ उतंग<sup>3</sup>। पूरव दिसि गढ रघुनाथ नांम, तिल तीरथ गलता है सु ठांम ॥१६१॥ दक्षिरा दिसि संकर-गढ श्रनूप, माधवस्यघ वनवायो हथरोही कौ गढ दुतिय जांनि, पिछ्छम १हि सुदरसन गढ वर्षानि ॥१६२॥ **ध्रं**वावति है स्थांन, उत्तर तापै स्वाई जै-गढ महांन । दक्षिरा की कूंरा पाय, व्रंह्मपुरी\* दीन्ही वसाय ॥१६३॥ इक

१५६: १ घनै। २ है।

१६१: १ चहुघांपुर । २ A वनवाऐ। ३ म्रभग। ४ रुघनाथ।

१६२ १ पछिम ।

१६३ १ पछिम ।

<sup>†</sup>Bodyguards

**<sup>‡</sup>The Rayylat** 

<sup>\*</sup>for Brahmins to reside there

किवत प्रथम कुमर पदई मैं वड़ी जंग जीत्यी,
प्रतापीक : क्रूट्यौ दल दिषनी को, गहें सर चाप सौ।
वंदी जिन रूंदी कोटावारे पर डंड लयो,
सवही सराहत सवाई भयो वाप सौं॥
विरिच्च वचैंगे न मवासे मिह मंडल मैं,
संमृति विचारि जे वचैंगे जय जाप सौं।
सवाई ईस्वर्रासघ महाराज नरनाह,
रांग भयो रांनां तेरे पावक प्रताप सौं॥१७२॥

दोहा : वहुरि पाटि वैठे नृपति, रांमपुरे ते श्राय। भाई माधवस्यघ जू, दुरजन कौं दुषदाय॥१७३॥

किवत्तः जिन रांमपुरे मैं करी निज चाकरी,

सो घरि राषी विचारि हिये।

फिरि पाय के राज ढुंढाहर की,

सु नऊ निधि के सुष ग्रांनि लिये॥

भनि 'राम' क्रपाते भने ही भने,

ग्रमरेस के से जिनु दांन दिये।

हरि ऐक सुदांमां निवाज्यो कई सुदामां किये॥१७४॥

सोरटा ' दिये दिवाये दांन, जस प्रगट्यो दसहूं ' दिसनि । उने जगत परि भांन,राज कियो 'यम 'मुलक परि ॥१७४॥ प्रागं नृपति भ्रनंत, जतन किये भ्रायो ' न गढ । रराथंभीर महंत, सौ माघव सहजे लहाौ ।॥१७६॥

किन्ति : श्रेंसी मौज कढत सवाई माधवेस कर, सुवरन-भर ज्यों प्रवाह नदी नद के।

१७२ १ कवित्त । २ दक्षिनी । ३ मयो । ४ ईश्वरस्यंघ । ५ महाराजि ।

१७४ . १ वाज्यौ ।

१७५ १ दसहीं। २ किया। ३ इम।

१७६ १ भ्रायो । २ लयो ।

१७७ १ कवित्त भ्रन्योक्त ।

छंद पद्धरी :

भ्रव सुनिऐ भविजन वात ऐक, देहरे वने पुर मै ग्रनेक। सोहत सुंदर सिव विस्नु<sup>9</sup> जैन, तिनकी उपमा<sup>२</sup> कहतें वनै न*॥*१८४॥ के नर-नारी प्रवीन, षटसत निज धर्म मांहि निति रहै नीन। तिन मांहि देहुरा ईक<sup>२</sup> विसाल, तँह राजत नेम प्रमू दयाल ॥१८४॥ लसकरी नांम कहियत महांन, मनु रच्यौ विरंचिजु करि सयांन। मधि चौंरी प्रभुकी मत प्रमांन, श्रति वनी फटिक सम लगि पर्षांन ॥१८६॥ ता मांहि जटित है स्यांम संग, मनु लसत नील मनि श्रति सूरंग। चित्राम वन्यौ तामै श्रनुप, लिख<sup>२</sup> भविजन पावत निज सरूप ॥१८७॥ पंडित तहां राजत है कल्यांन, वह तरक न्याय वांचत पूरांन। निज धर्म<sup>9</sup> कर्म मै सावधांन, विन धर्म वात जिनकै न स्रांन ॥१८८॥ गुनकीरति यक मुनिवर महांन, तप करत श्रधिक जिनमत प्रमांन। तिन<sup>9</sup> स्राग्या दी यह रचहु गृंथ<sup>२</sup>, जामै वहु विधि ह्वं जैनि पथ ॥१८६॥ मुनि संघ गछ्छ ह्वं श्रामनाय, जिनकी उतपति कहिऐ वनाय।

१८४: १ बिश्तु। २ उपमा।

१८५: १ रहें। २ इका

१८७ १ मिए। २ लिख।

१८८: १ धर्मा।

१८६: १ तिनु। २ ग्रंथ।

१६०: १ गरा।

तिन मांहि फटें हैं गछ अनेक, गहि चलन नऐ सु कहाँ प्रतेक<sup>२</sup>॥१६०॥ फुनि मुनिजन को जो चलन धर्म<sup>9</sup>, तिनकौ हू विधिवत कहऊ<sup>२</sup> मर्म। प्रभु महावीर तैं जे मुनींस, श्रवलों भट्टारक है जतीस ॥१६१॥ इन<sup>9</sup> जहां जहां पायो पदस्त, सोह वरन करिए समस्त। श्रावग<sup>3</sup> के हैं जो खांप<sup>४</sup> गोत, तिनकौ वर्नन<sup>५</sup> करिऐ उद्यौत<sup>६</sup>॥१६२॥ फुनि श्रहौरात्रि किरीया करे सू, जिन धर्म जु जैनी जिम धरें सु। विधि दया<sup>२</sup> दांन की कही सर्व, तिम श्रावग साधिह त्याग गर्व ॥१६३॥ श्रांवग मुख वात कहैं किलेक<sup>9</sup>, जिनमत की वह विधि करि विवेक। सोह घरिए या गृथ माहि, लिख ससय भविजन के मिटाहि ॥१६४॥ यह ध्राग्या पाई वखतरांम, गोत है साह चाटसूं ठांम। पडित कल्यान तै विनति कीन, यन की हु गृंथ रचे नवीन ॥१६४॥

१६० ' २ प्रत्येक।

१६१ १ घरमा । २ कहहु। ३ तै।

१६२ १ इनु। २ वरनन । ३ श्रावक । ४ षाप । ५ वरनन । ६ उदोत ।

१६३: १ किरिया,। २ वया।

१६४ १ कितेका २ की।

१६५ १ इन।

<sup>†</sup>Divided

<sup>1</sup>About 27 miles S-E of Jaipur.

फुनि चांद्रवाड़ सत्तीषरांस<sup>9</sup>, भावसा रूड़मल वृद्धि धांम। मिलि कही गृंथ रिचऐ श्रनूप, जाते जाने जिनमत सरूप॥१६६॥ इम इनकी श्रिधिक सहाय पाय, वरनत हों श्रव कविता बनाय। जो यामै चूक कछूक होय, लिष हसह न दुरजन सजन लोय॥१६७॥

दोहा: प्रथम गृथ हो संसक्रत<sup>9</sup>, नीतिसार<sup>†</sup> हितकार। ईद्रंनंदि मुनि करि रचित, जिन वांनी श्रनुसार<sup>२</sup> ॥१९८॥ जिनमत में ते श्रौर मत, तूतन चले कितेक। तिन परि संसय मिटन कों, रच्यों गृंथ यह ऐक ॥१९६॥ तव ताको कीन्हों श्ररथ, पंडित महा कल्यांन। वखतरांम भाषा करी, ताही तने प्रमांन॥२००॥

#### प्रथम भाषा गृंथ की

चौपई: श्रीजिन नेम जगतत्रय नाथ, तिनकों नमौं जोरि जुग हाथ।
जे जग मांही मुनि ग्रनगार, परम तत्व के जाननहार ॥२०१॥
तिनकी संपति महा मनोग्य, सुरपित करि सराहिवा जोग्य।
तिनकौं नीतिसार यह गृंथ, किह हों सकल चलन सुभ पंथ॥२०२॥

१६६ . १ सतोषराम ।

१६८: १ सस्कृत । २ श्रनुसरि ।

२०२: १ है।

Publid as No. 13 of the 'Manekchandra Digambara Jaina Granthmala', Hirabag, Bombay. It contains 110 stanzas, and in verse 70 the author Indranandin refers to Nemichandra. Other copies of the work have been found at Arrah, Bombay, Idar, Jaipur etc (H. D Velankar's 'Jinaratna Kosa' Vol 1 p 216) Two copies of the work are preserved in the Digambar Jain Bada Mandir, Jaipur, (Catalogue Comp. by Dr K. C. Kasliwal, pt. II) The author has been styled as इन्द्रमन्दि योगीन्द्र । 'Nitisara' is not a voluminous work. Most probably the author refers to Indranandin, whom Acarya Nemichandra holds as श्रूतसागरपारगासी in the Gommatasara.

वाही जंबूदीप मभारि, दक्षिगा दिसि लीजिये विचारि। तामें भरथक्षेत्र ता माहि, मिंद्ध देस म्रति सुव वसाहि ॥२०३॥ श्री म्हावीर जु सिवपुर गऐ, ता पीछै जे मुनिवर भऐ। यसौभद्र लौं सकल छवीस, फुनि हुव भद्रवाहु मुनि ईस ॥२०४॥

दोहा: वन छवीस के नाम जो, देष्यो चाही कोय। वरनीं जहां पटावली, तामैं लिषयो लोग ॥२०५॥

चौपई : काल चतुरथ जु भयो वितीत, तब श्रायो पचम भयभीति ।

भऐ श्रवंती विक्रम भूप, भद्रवाहु मुनि हुते श्रनूप ॥२०६॥

ते तौ स्वर्ग पहाँचे जाय, फुनि जो भईस सुनि मन लाय ।

वे प्रभु वर्वमान जिनराय, तिनकों मत भविजन सुषदाय ॥२०७॥

सघ वहुत प्रगटे ता मिंह, यह विचित्र गिंत काल प्रसिद्धि ।

निज इछा माफिक जग जवं, चलन लग्यो श्रापस मे सवे ॥२०८॥

पाप ताप करि मोहित होय, काहू को मानत निह कोय ।

तव जे मुनि हे महा प्रवीन, परमायी सु श्रातम लीन ॥२०६॥

तिनकं मन विचार श्रपनो , श्रपने श्रीर पराऐ तनों ।

जो इनकी वंधे न मरजाद, तौ न मिटै तम तनो विषाद ॥२१०॥

दोहा: ऐक-मेक ता सविन की, लिष के डरे महंत। तव उत्तम पुर षानि के, निमत विचारी संत॥२११॥

सीरठा: ' संघ गळ्छ' गरा सार, साषा ऐ च्यारौ सुविधि ।

करिकं परम विचार, प्रथम सथापे मुनिनु के ॥२१२॥

ग्राम नगर के नाम, खांप' गोत श्रावगिन के ।

ठहराऐ लिंघ ठाम, सो श्रवली यह प्रगट है ॥२१३॥

२०३. १ विषिए। २ मरतयेत्र। ३ वसाहि।

२०४ १ पीछ । २ यसोमद्र ।

२०५ १ लिषयौ

२०६ १ मयमीत।

२०७: १ पहुचे।।

२०६ . १ स्व ।

२१०: १ मनि। २ ऊपनी।

२११ १ उत्तिम। २ निमति।

२१२ . १ गछ।

र्हेंदे. १ वापे। २ ए। ३ हैं।

तामै सव श्रावकन की, जिम उतपति है चारु। दोहा : सो तौ म्रागें वरिन हीं इनकौ सकल प्रकार ॥२१४॥ प्रथम वरन मुनिगननु कौ, कीजत है सुभ जांनि। ्प्रंथन के श्रनुसार ते, सव जन की सुखदांनि ॥२१५॥

## प्रथम संघादि-उतपति

चीपई . भद्रवाह मुनिगन के ईस, तिनके पट मैं भयो मुनीस। संवत छुब्बीसा के साल, नाम तीन तिन लहे रसाल ॥२१६॥ गुप्त-गुप्त श्राचारिज भऐ, दुतिय नांम श्रर्हद<sup>°</sup> विल दऐ। त्रितिय विसाखाचारिज नांम, ताकै सिक्षि च्यारि श्रभिराम ॥२१७॥ इक तौ माघनंदि मुनिराय, व्रषा जोग दिय तरु तलि जाय। तिनको नंदिसंघ थापियो<sup>२</sup>, गछछ सरस्वती निमापियो ॥२१**४॥** 

चौपई १: पारिजात-गञ्छ ३ ह कहैं, गङ्छ-नांम ऐ दो निरबहैं। गरा थाप्यो है बलातकार, साषा तिनकी थरपी<sup>3</sup> च्यार ॥२१६॥ नंदिकीर्ति भूषरा फुनि चंद, ऐती या विधि भऐ ग्रमंद। दूजे देवसिंह मुनिराज, कहिए श्री जिन धर्म-जिहाज ॥२२०॥ सिंघ-गुफा मधि वरषा जोग, तिन मुनि दीहौ महामनोग। सिंघ-संघ तिनकौ निरमापि, चंद्र-कपाट-गऴ्छ दिय थापि ॥२२१॥ गरा कारा १ रस थाप्यो मुनी, साषा च्यारि नांम भवि सुनी। श्राश्रव कुंभ सू सागर सिंध, ईनर्में लिखऐ ग्यान श्रभंग ॥२२२॥ तीजो भिषि सेनि मुनि भयौ, वृषा जोग कूं चाललि दयौं। सेनसंघ<sup>ड</sup>ें पुसकर गछ घरचो, गरासूरस्थे<sup>४</sup> नांम यह करचो ॥२२३॥ साषा च्यारि सुर्गों गुराघीर, सेन राजभद्र फूनि वीर। चतुरथ सिंघि देवमुनि ईंद , वरषा जोग घरचो गुरावृंद ॥२२४॥

२१४ . १ गृथनि । २१७ १ १ श्ररहद ।

२१८ १ वृषा । २ थापियौ ।

२१६ ' १ A missing । २ गछ । ३ थापी । २२० १ नवकीत्ति । २ देवस्यघ । २२२ १ कांगू । २ इनमें । २२३ ' १ तीजों । २ सिष्य । ३ चातलि । ४ सेन स्यंघ । ५ सूरस्छ ।

२२४. १ सिंघ। २ इद।

देवदता वेस्या घरि जाय, तप कीन्हीं तिन मन वच काय। देवसघ<sup>ः</sup> थाप्यो तिन<sup>२</sup> तनों, सोभित देवप्रभा सम मनों ॥२२५॥ गछ पुसतकगरा देसी ठानि, साधा च्यारि करीऐ जानि। देवदत्त पुग फुनि नाग, तिनकौ है जग मैं सोभाग॥२२६॥ जिहि जिहि थांनक मुनि दिय जोग, तिह विसेष किय नाम सँजोग । इम साषा गरा गछ संघ सवै, थपे मूनी श्रहंद विल तवै ॥२२७॥ इन च्यारिनु की कियो मिलाप, मेटन कीं जग की श्रघ ताप। च्यारिनु मैं दीक्ष्यादिक कर्म, तिनमें भेद नही को भर्म ॥२२८॥ फुनि पडकमरा। प्राछत । जान, ग्रंथ ग्रचार सु ग्रीर प्रांन। तिन के मिं विसेषि<sup>२</sup> को संत, मेद न जानहु<sup>3</sup> सकल महंत ॥२२६॥ इनकी भ्रामनाय में कोय, जो जिन विव प्रतिष्ट्यो होय। जे भविजन है या जग माहि, ताहि मांनियों संसय नाहि ॥२३०॥ भ्रौ संघ कीजो श्रमनाय, तामैं विव प्रतिष्ट्यो जाय। ताहि मानिवो नहि कुल-रीति, वामै न्यास तर्गी विपरीति ॥२३१॥ ऐही सघ जगत में सार, स्वै परमोक्ष दिषावनहार। इनमें भेद कियो जो चहै , निह समिकती मिथ्याती वहै ॥२३२॥

श्रथ श्राचारिज श्रादि गृहस्थाचार '-यति -वर्नन चौपई : जे मुनि पालै पंचाचार, ह्वं वे ता मुषि मूलाचार। सोही च्यारि सघ मैं मांनि, ग्राचारिज कहिऐ गुनखांनि ॥२३३॥ नय स्रनेक करि साख सकीर्एं, तिनके स्ररथ माडि परवीएा। समरथ कर वामें व्याष्यान, पचाचार माहि रत जान॥२३४॥ सोही सही उपाध्या होय, श्रवं साघु-गुरा सुरा भवि-लोय।

सकल परगृह १ रहत ३ जु होय ३, करं नही व्याव्यान जु कोय ॥२३४॥

१ देवस्यघ। २ तिह। २२४

१ जिह जिह । २ <sup>A</sup> प्ररहद २२७

१ विष्याविक । २२५

१ प्राछित । २ वसेष । ३ जानहु। 355

२३२ . १ वहै।

१ गृहस्छाचार्य । २ ति only । २३३ .

१ ध्रयं। २३४ .

१ परिगृह। २ रहित। ३ सोय।

दिक्ष्या सिष्यादि करे कर्म, तात ह्व विरक्त गिह धर्म।

मौनि ध्यांनजुत ह्वं जो साध, ताहि जांनियों निर-श्रपराध ॥२३६॥

सास्र कला नाना परकार, तिनमै चतुर होय गुगाधार।

गछ्छ वधांवन वुधि तिह तनी, ऊचे मन कौ ह्वं जो मुनि ॥२३७॥

फुनि वै कातिवांन हू होय, ताहि भटारक कहिऐ लोय।

तत्व श्ररथ सूत्रन व्योष्यान, क्रिया-कलापन मांहि सुजान ॥२३८॥

सो स्वामी कहियतु है चाहि, मुनि सत्तम हूं कहिऐ ताहि।

ऐती भेद मुनिनु के भगों, सुगाहु ग्रहस्थाचारिज तगों ॥२३६॥

जो गृहस्थ सुध ह्वं कोय, जिनमत तगो सास्र जो होय।

तिनको पढन-पढांवन-हार, करन-सुनन की ह्वं वुधिचार ॥२४०॥

कथन सुनावत हू ह्वं चाहि, ह्वं श्रजीवका याही मांहि।

सवतं पूजनींक ह्वं रहै, ताहि गृहस्थाचारिज कहै॥२४१॥

श्रथ मुनिजन कों धर्मकार्य करवा को वा श्रधर्म-कार्य तजवा को वा जोग्य श्रजोग्य कारिज करवा न करवा को उपदेस वा श्रावक<sup>े</sup> कों उपदेस वर्नन भाषा गृंथस्य ।

नौपई : नंदि सिंघ देव फुनि सेन, ऐ उतिकष्ट संघ मत जैन ।
तिनकौं जोग्य श्रजोग्य विचार, भाष्यौ नीतिसार मै सार ॥२४२॥ इन च्यारिनु के है मुनिराय, होय विसंघी तिनही सिवाय ।
तिनकी पंकति-भोजन जांनि, करिवो जोग्य नही सुषदांनि ॥२४३॥ वहुरि विसंघी लिष के मुनी, न करि नमोसत यह गुर भनी । च्यारयो मिलि निम श्रसन करांहि, तामें दूषन भाष्यो नाहि ॥२४४॥ फुनि मुनि सावधांन ह्वं घर्गों, श्रावक-संघ विसंघी तर्गों। तिनकौं करें न श्रंगीकार, कीऐं लागत दोष श्रपार ॥२४४॥

२३६ १ कए। २ मौिन।

२३७ १ ऊंचे। २ को।

२३८ - १ वह। २ म्रर्था ३ सूत्रनि । ४ कलापनि ।

२४०. १ गृहस्त । २ सुद्ध । ३ तिनकौ । ४ वृधि चार ।

२४२: १ थावग।

२४३ . १ ज्योगि ।

२४४: १ चारचौं। २ माष्यौ।

विसंघीन को सेवग होय, वह श्रावक जो श्रपणो कोय। ताको गृहण करें नहि दोष, निज मत की करिवा की पोष ॥२४६॥

श्रिल: मिथ्यादृष्टि तर्गो परीव्या कीनिए,

तवही वाकों निजमत दीक्ष्या दीजिए। विना परीक्ष्या दरसएा-एत की हांस्य ह्वं,

वहुरि श्राव श्ररु धर्म तर्गों भी नास ह्वं ॥२४७॥

हद लिष वाई श्रावकराी ग्रजिका जिंह थांनक में वसती होय। गीता: वहुरि भेंडी चित्राम-तराी ह्वं फुनि ह्वं ग्रीर जाति की कोय ॥ इनकें ढिगि ह्वं काम उदीपन मन ग्रति चंचल ह्वं गुन षोय। तिह थानक मुनिराज सर्वथा निसि में सुष सोवह मित कोय॥२४८॥

दोहा चित्र तर्गा हू फूलती, लिघ उपजत श्रनुराग।
तो प्रतक्ष तिय सिंग रहें, वयों न लगे मुनि-दाग ॥२४६॥
राह माहि भी श्रिजिका, साथिन मुनि चालंत।
श्रागे भी इन सग तें, दूष श्रित पाऐ संत ॥२५०॥
होय श्रकेली जो तिया, ताके संगि मुनीस।
भोजन करें न बैठही, गोष्टि करें न भलीस॥२५१॥
जिह जिह' थानक के विषे, इद्री घरें विकार।
ताहि छाडि मुनिवर करें, चारित रक्षा-सार॥२५२॥

छंद सामायक सतवन वंदन फुनि पड़कमरागै श्रर शत्याक्ष्यान । गीता : बहुरि करे कायोतसगं सब ऐ षट कहे श्रावसिक जांन ॥ ऐ किरिया तिज श्रीर क्रिया कछु करिह न बहुरि गीत बाजित्र । रसमय चित श्रनुरागि सुनें निह तजे रहे मुनि सदा पवित्र ॥२५३॥ जिह जिह साख श्रीर विद्या करि समिकत सजमादि गुरा हांनि । होत मुनिनु के सो सब सेवन छाड़िह जे मुनिवर गुनषानि ॥

२४६: १ विसघीति । २ कौ । ३ सेवक । ४ श्रपणीं । २४८ १ वहुर । २ मडी । ३ जोय । ४ सरबया ।

२४८ १ वहुर २४६: १ सँग।

२५२: १ जिह जिह । २ घर ।

२५३. १ पिंडकमेण्। २ ग्रद। ३ प्रत्यक्षियांन । ४ ग्रोर।

२५४ १ समिकत।

श्रिजिका सिष्य गृहस्थ श्रादि नर थोड़ी वुधि त्राले जो होय।

तिन श्रागे सिघांत श्राचार सु गृंथन वाचिह जे मुनिलोय ॥२५४॥

होय विसंघी जती सु तिनकौं गृंथ सिघांत श्रवर श्राचार।

कवहू नाहि सुगाय पढावहु सुगिवौ हू वनकौ निह चार॥

वहुरि वंदना पीछै पहली कवहूं करिवो नांहि न जोग्य।

श्रेसै कही सासित्रन मै गुरु धारिह ते मुनि महामनोग्य॥२५४॥

छंद श्रंरिल : दीषित होय नवीन मुनीस्वर जासकों,

वडी श्रर्जिका होय सु वेदै<sup>3</sup> तासकौं। भक्तिभाव करिकै सव संका यरहरै<sup>४</sup>,

श्रजिका ते मुनि प्रथम वंदना नाहि करे ॥२५६॥ श्रजिका श्राप नमोस्त मुनी कों जव करे,

कर्मक्षयोस्तु समाधिरस्तु मुनि ऊचरै । श्रावग करै नमोस्त जपे मुनिनाथ सौ,

धर्म-विघी देवे तव मुनि निज हाथ सौं ॥२५७॥ मिथ्याद्रव्टी भी कोई वंदन कहै ,

परि वह भले वरण की ह्वै निज की चहै । ताहि मुनोस्वर धर्मविधि किह स्रघ हरे,

सूद्रिन कों कहि धर्मलाभ राजी करैं ॥२५८॥ समकित दरसरा किर चांडाल जुसुद्ध ह्वे,

करं वंदना मुनि कोंं मुनी सुवृद्ध ह्वं । पापक्षयोस्तु कहै ताकों सुभ वे नहीं, वाकों स्रोर कहन की विधि कछु हैं नही ॥२५६॥

किवत . गायक तमोली तेली माली छीपी कोटवाल, वहुरि कलाल मद वेचे है वनाय कै।

२५४ ' २ जे।

२५५. १ होत। २ पाछै। ३ नु। ४ सासित्रिनि।

२५६: १ A ग्ररिल only । २ वीक्षत । ३ वव । ४ परि हरें।

२५७ : १ वृद्धि ।

२५८ १ हिष्टि। २ कहें। ३ चहें। ४ वृद्धि। ५ करें।

२४६: १ A दरसा। २ कीं।

वेस्या श्रीर दाई फुनि मांगि षाने वाले,

जन मद वेचे पीवे तिन संगि रहे चाय के ॥

केते नींच कर्म करि श्राजीवका पूरी करे,

इन श्रादि सूद्रह ने जीविन उपाय के ।

तिन के मुनीस सावधांन ह्वे जी,

धर्म माभि करें न श्रहार घरि सर्वथा ही जाय के ॥२६०॥

छ'द महा मिथ्याती के घर मै मुनि भोजन नाहि करें इम जानि। गीता : वनकै वस्त सदोस वायरै तिह कारिए त्यागै दुषदांनि ॥ याते भलो रसोई करि निज जो जीमरा ठाने तौ ठांनि। भाषी अधिक दोष लिष कै भवि निश्च नयन कही यह वानि ॥२६१॥ ह्वं मध्यांन समें तवही लिष दीन ग्रनाथ दुषी को जीव। तिनकों भोजनादि वस्तनि कों हित करि के द्रावत सदीव ॥ इह<sup>3</sup> विघ<sup>४</sup> करत<sup>१</sup> सावघानी जे दयाभाव उर<sup>६</sup> घारि मुनिद। पूजनीक ते भुनिनु माभि ह्वं करिह प्रससा तिनकी इँद ॥२६२॥ मुनिवर होय तावड़ ठाढे फुनि छाया के मधि ग्रावत। छाया ते चिल जात तावडे काह कारिए के गुरा संत ॥ काली घरती तें गोरी मधि गोरी ते काली मैं जात। दया जानि जीवनि की लैं करि पीछी सोघत है निज गात ॥२६३॥ रुके होय घर जा गृहस्य के वँघे होय सुर स्रांगन सांहि। विरग<sup>3</sup> त्रिरग वहुरि ग्रन्न सूकत इन ग्रादि जु कर्म सदोष<sup>y</sup> लषाहि ॥ भोजन करें नहीं मुनि ता घरि दोस न ह्वं ता के घरि जाय । ठाढे सात स्वास लौं रहि फुनिदाता न ह्वैं स्रोर<sup>७</sup> घरि जाय ॥२६४॥

चौपई मुनिवर भली वुरो भी कोय, श्रपणी श्रोर परायो होय। भूष मरत लिष के श्रंन-दान, देहु गृहस्य विलवन ठांनि॥२६५॥

२६१ १ उनकै। २ तिह। ३ कारण।

२६२: १ वसतिन। २ द्यावत। ३ इह। ४ विघि। ५ करे। ६ कौं। ७ जे।

२६३ १ तावहै। २ कारए।

२६४ '१ ग्रहस्छ । २ पसु । ३ विन । ४ दोस । ५ म्राय । ६ म्रोर ।

२६५: १ चोपई। २ मलौ। ३ बुरौ। ४ परायौ।

छुपै ; सम्यकद्रष्टी होत यान चारित्र घरै विनि। सो भ्रतिसय करि पात्र होय भ्राचर्गं वरे मुनि॥ मिथ्याद्रष्टि होय ग्यान चारित कौ धारी। सो नहि पात्र कहात कुमारग<sup>४</sup> को श्रधिकारी॥ जे होत सुपात्र सुमारगी तिन्है दांन देवो जुगति। मित पाषंडी कौं देहु भवि दिऐ वढे मिथ्या कुगित ॥२६६॥

जीररा ह्वे जो कोय, प्रतिमा पोथी देहुरा। किरि थापें ग्रति होय, पुंन्य न ऐहू करण ते ॥२६७॥

सवैया: सूतौ तथा चित्त है उदविझ , करै मल मूत्र किघौ जवही को। कर्म क्रत्ती होय निदिह ताहि, करे नहीं वंदना साध-रती को ॥ ह्वं सावयांन जवं सव ही विधि, धर्म श्री ध्यान मै लीन जती को। ताही मुनिस कौं वंदना जोग्य, कही करवो सु भलौ सवही कौं ॥२६८॥

करि नमोस्त निरगृंथ कौं, ग्रजिका कौं वंदांम। दोहा ' उत्तिम<sup>9</sup> श्रावग कीं करें, निज मूख ते इछांम ॥२६६॥ भोजन नमरा सु श्रादि की, जे हैं रीति सुजांरा। पूर्वाचारिज मांनि ह्वं, सोही करह प्रमांए ॥२७०॥

पूर्वाचार्य उलंघि करै, रीति वोछी श्रिधिक। सोरठा वह मिथ्याती संघि, वड़े पुरिष वंदै नहीं ॥२७१॥ छंद पद्धरी : मुनि ऐकाकी जु करें विहार,

> पावै नहि धर्म कहं लगार। दूजे मुनिके रहिजे जु<sup>9</sup> संग, तव हीयें है सुभ घर्म श्रंग॥२७२॥ मुनि पांच च्यारि फुनि कहैं तीन, तिनहीं के साथि मूनि नवीन।

२६६ : १ दिष्टि । २ होय । ३ ब्राचरएा । ४ कुमारिंग । २६८: १ उदिवान। २ भंलै।

२६६ १ उत्तम। २७२: १सु।

२७३ . १ महे।

करिए विहार इक रहिं<sup>2</sup> नांहि, गिराती की ह्वं वह गल्छ माहि॥२७३॥ मद मास मघू विनि मंत्र साघि, वह करत सिद्धि देवनि स्रराधि। जे मद भ्रादिनु ते होत सिद्धि, ताकों श्रसिद्ध कहिए निषद्धि ॥२७४॥ . मुनि घारि रहें तन वस्त्र सील, निरगृंथ पर्ग राषे सुडील। त्यागरा ह्वं जो निज देह प्रांरा, नहि जोग्य वस्त्र गृहराौ प्रमारा ॥२७४॥

चौपई: पंच प्रकार वस्त्र करि होन , जे सजम घर मुनि-तन षींन। भींटत राषत दर्व्य न हीन, मांनत तिन्है पुरिष परवीन ॥२७६॥ कवहू नेत नहीं मुख सोधि, ठाढे जीमत दयापयोधि। मेट संघ सौं ले नही रती, ते जग माही साचे जती॥२७७॥ दीक्ष्या दाता फुनि जु पढावै, श्राचारादिक गृंथ वंचावै। दोषरहित गुएासहित जु होई, ताहि गुरू कहिए भवि-लोई ॥२७८॥ मूल संघ गरा गळ्छ सुपात्र, जुक्त होय मुनि जैनी मात्र। सवही गुरु करि मानों जेह, इनमें श्रोर न करि सदेह ॥२७६॥ पुस्तकसंघ वृद्धि, के काज, श्रलप श्रजाच्यो धन रिषराज। कालदोष करि जे राषंत, तिनकौ दोष नहीं हे संत ॥२८०॥

श्रव फुनि वरसा सैकड़ा, पार्छ जाहु सरीर। दोहा : तजै न मारिग सर्वथा, जे विवेकघर घीर ॥२८१॥

जिंह मूनि की चित ह्वे सदा सुद्धी, छ'द पधरि: लिंग रहारे भ्रातमां में सुबुद्ध।

२७३ २ रहहु।

२७४ : १ निषिद्धि ।

२७५ १ गहराौँ । २७६ १ हीरा ।

२७८ १ वीक्षा।

२८२ १ सुध।

ताको नृप वा श्रावक जु होय,

वयों ही करवा समरथ न कोय ॥२८२॥

लिष विस्तिकांनि मैं मुवो जीव,

पंचेंद्री फुनि लोही श्रतीव।

मुनिवर कौं रे भिव तास मांहि,

पिडकमर्गों करिवो जोग्य नांहि॥२८३॥

चौपई . मुनि दिगंवर जे गुराग्राही, वांचत है सिद्धांत सदा ही। ते एते दूषन् कों टारे, तव ही इनके वेन उचारे ॥२५४॥ वांचत विख्यान वैठत पाटे, मूमि षेत्र ले सोधिनि राटे। ह्वें निरजीव तहां ही वांचे, घट्टरि विनय ते श्रति ही राचे ॥२८४॥ ते उतिकष्ट भरण कों करिहें, सुभ गति मांभि पाव वे घरिहैं। करत वंदना जव प्रभु काजे, अंचे श्रागुल<sup>३</sup> चवलो<sup>3</sup> राजे ॥२८६॥ वहुरि समै संघ्यारज वरषे, गृहरा सु उलकापातिह परषे। चमकत बीज मेघ वह गरजें, तवहं वाचत नहि मुनिवर जे ॥२८७॥ विनहीं काल सृद्ध ह भाषे, तेह फल श्राछे नहि चाषे। श्रध्यातम सिधांत श्राचार<sup>9</sup>, गृंथ प्रायश्चित किरियासार ॥२८८॥ विनि विधि वाचन तजौ प्रसंगा , फुनि ह्वं कोय विसंघी संघा । तिन हूं कै संगि वाचत नाही, यह गुर नीके सीष वतांही ॥२८॥ करत प्रायश्चित जे मूनि चोषा, साख मांभि देखि वह दोषा। 'माफिक गुंथ प्रायश्चित देगां' भ, घटि वहि देय दोष क्यौ लेगां ॥२६०॥ गराधरांनि की तौ गुर-भक्ति, करि स्रति नमसकार के जुक्ति। मुनि नवींन दीक्षत ह्वे ताहि, वंदन प्रति वंदनां कराहि ॥२६१॥

मुनि सास्त्र-करता नांम-वर्नन श्रिरल : भद्रवाहु श्रीचंद वहुरि जिनचंद है, तिनकी मुनिवर-गन मैं बुधि श्रमंद है।

२८३ ' १ वस्तकांनि ।

२८४: १ दूषरा।

२८६ : १ उतकृष्ट । २ म्रागुल । ३ चउलौ । 🗸

२८८: १ श्राचार।

२८६: १ प्रसग। २ सग।

२६० : १ 'माफिक दोष प्रायश्चित देखा'। २ देइ।

२६२ . १ छद श्ररिल ।

गृघपछि पुनि लोहाचारिज नाम हैं, ऐलाचारिज पूजिपाद श्रभिरांम है ॥२६२॥ वडे कवीस्वर वीरसेनि जिनसैनि है,

इक दस ऐं गुरानदि भले तिनु वैन हैं। सुमतिभद्र श्रीकुभ श्रवर सिवकोटि ऐ,

कहे सिवायन विस्वसेन जग वोटिऐ ॥२६३॥ गुराभद्राचारिज गुरा श्रधिक विराज हीं,

है श्रकलंक रु सोमदेव छवि छाजही। प्रभाचंद श्ररु नेमचद<sup>र</sup> मुनिराज है,

ऐ ईकईस<sup>3</sup> भऐ गुर धर्म-जिहाज है ॥२६४॥ इत्यादिक जे मूलसंघ-घारक मुनी,

जिनके रचे सासत्रिनि नांचत है दुनी। तिनके वचनर्नि वाचि मांनिवो जोग्य है,

जे मानिहि ते जगमें महामनोग्य है ॥२६५॥

दोहा रचे जु संघाभास मुनि, गृंथ भले भी कोय।
तिनहि वाचिवो मांनिवो, जोग्य नही भवि लोय॥२६६॥
कारण याकौ यह लषौ, वै कहि भीठी वात।
फुनि लुभाय वह काय कै, निज मत मैं ले जात॥२६७॥

श्रिरिल । पूर्वाचारिज वचन कहै सो मांनिऐ, वीतराग के वचनतुल्य वे शांनिऐं। जानन वाले भविया पंचम काल मैं,

> वदनीक ह्वं है गुर परम दयाल मै ॥२६८॥ पहिले दर्व्य लग को घारत है गुनी,

> पीछं ह्वं है भाव-लिंगधारी मुनी। विन दर्वी वह वत हू करतौ होय जो, वंदनीक नहि होय जगत मैं सोय जो ॥२६६॥

२६२ २ गृद्धपछि ।

२६३ १ कवीसुर । २ वीरसेन । ३ जिनसेन ।

२६४ १ ग्रह। २ नेमिचव । ३ इकईस ।

२६५ १ सासत्रनि ।

२६८ १ झरिल छद। २ वै।

२६६ ३ १ लिंग।

कित : दर्ब्य-िलग को स्वरूप यह जांनिऐं स्रतूप,
विना वस्त्र होय ते दिगंवर कहात है।
सिर डाढी मूछिन के केसिन की लोंच करें,
कांषादिक वाल विषे नजिर जे स्रात है॥
स्राभरण नांहि कमडल पीछी हाथ मांहि,
धरें यह रूप सव गृंथिन में गात है।
दर्ब्य है सुभाव ही को कारण प्रतक्ष दीसें,
भाव है सु ग्रध्यातम गोचर वतात है॥३००॥

सोरठा : मुद्रा जग मै मांनि, विनि मुद्रा निह मानि है । नृप मुद्रा करि जांनि, लघु नरकौं मांने वड़ो ॥३०१॥

छंद : यह नेद कहूं प्रितमां के, लिष काछ स्रादि कछु ताकै।

वह स्वेतांवरी जु होई, काष्टासघी ह्वं कोई॥३०२॥

ताको वंदन निंह कीजे, परितृष्टा सुद्ध नही जे।

यातें वंदन वरजी जे, मुनि की विधि ऐ सुनि लीजे॥३०३॥

ह्वं रूप कुलगी वाकौ, वदन न करों भवि ताको।

उपदेस तवें विपरीता, ताते वरज्यों यह मींता॥३०४॥

दोहा: जिंह जिंह कारिज ते धर्म , वधै सु करें सही सु।
माननीक ह्वं ते जती, निंदन जोग्य नहीं संशा३०४॥

छद चाल मुनि पें मुनि कोई म्रावे, म्रावर किर तिंह वैठावै।
प्राष्ट्रिनिको विधि कर वांहों, विद्य चाले वरजै नांही ॥३०६॥
पाटा पोथी पीछी वे, विन मांगें नांही छीवै।
जव लों वह संगि रहावै, भिष्या कौं भ्रमण करावै॥३०७॥
यह धर्म निरतर भाष्यौ, मुनि राजनि सो म्रभिलाष्यौ।
फुनि निज गुर के म्रांवन की, विधि कंहूं तोहि पांवन की ॥३०८॥

३००: १ सरूप। २ दिग्गंवर। ३ प्रतक्षा।

३०१:१मान्य। २ वडे।

३०५:१घरम। २सु।

३०६. १ छद।

३०८: १ होन।

गुर श्रात दूरि ते देखें , विंदि निकटि जाय पद पेखे । श्रनकूल होय मुनि श्रागे, किर नमसकार श्रनुरागे ॥३०६॥ सेवा तिन की वहु करई, किर सुद्धभाव श्रघ हरई। नहि को या धर्म-समांनों, यह सकल-सिरोमनि जांनों ॥३१०॥

दोहा . दया करें गुर सिष्य पें, पुस्तकादि जो देय। भावसहित दुहुँ हाथि लें, सिषि वदना करेय॥३११॥

चौपई : जौ लौं मरगा करें जग माहि, वचन दीनता भाषें नांहि। श्राजीवका निमत्ति जे मुनी, धर्म-ध्यांन छाड़ै नहि गुनी ॥३१२॥

दोहा: षुध्या करि ह्वै दूवले, मैली होय सरीर।
ऐ भूषएा हैं मुनिनु के, लाज मरे नहि घीर ॥३१३॥
मन करिके मुनि सुद्ध ह्वै सोही सुद्ध कहाय।
मन विनि तन सुध होत नहि, कोटि सनान कराय॥३१४॥

हुप्पे: कार्य श्रकार्य विचार जाराते ह्वं सव भाषा।
सर्व सास्त्र कौ श्रर्थकररा की है श्रभिलाषा॥
धर्म तर्गों उपदेस देनवारे मुनिराई।
ह्वं गुरावांन जु कोय ताहि मानों सव भाई॥
फुनि होय सुद्ध मुनि निगुरा हूं, मुद्रा लिष के मानिएं।
श्रावग सु श्रवग्या साध की मन वच तन नहि ठानिएं॥३१५॥

सोरठा: धर्म तर्गौं व्यौहार, उपदेसी के श्रासिरं। है याते यह सार, जोग्य वात तुमकों कही ॥३१६॥

छुद गीता भक्त विसंघी कौ श्रावक जो भक्ति जुक्ति करि भोजन देय। भोजन<sup>9</sup> भाड<sup>२</sup> सुद्धता करि के तहा मुनीस ग्रहार करेय॥

३०६ १ देख्ये । २ उठि । ३ ध्रनकूल ।

३१०. १ माव सुद्ध।

३११: १ हाथ।

३१२: १ नहीं।

३१४: १ श्रारथकरता। २ वाले। ३ साधुकी। \

३१७: १ माजन। २ भड।

भंड कहे मांटी के वासरा भाजन कांसी पीतल मांनि।
तहां श्रहार ले न निह वर ज्यौ दे सो ही वह उत्तिंम दांनि ॥३१७॥
श्रावक जो कदाचि श्रेसो ह्वं भाजन भंड तास घरि मुद्ध।
ह्वं पाषंड़ी निंदनीक श्रित मुनिजन ते ते धरिह विरूद्ध॥
ता घरि भोजन करे नही मुनि जे धरमातम हैं गुन-षानि।
महापाप ते भरचौ श्रंस लिख करि निदांन वह छोड़त जानि ॥३१८॥

सोरठा : निह भीटत सुमरंत, चित्र काठहू की तिया। तौ साची तिय संत, छुप क्यो लहै न श्रापदा ॥३१९॥

चौपई : चित्रह की तिय भींटी होय, तिह दिन भोजन कर न कोय।
जीम चुवयो ह्वं जो मुनि सत, तो वेलो करि दोष हरंत ॥३२०॥
सपरस जिह्ना दोन्हों दंड़, तिह करि जग ठांने पाषंड़।
ताते ब्रह्मचर्य कों घरे, जती मनुष्ये हे गुगा श्राचरे ॥३२१॥
मुनि श्रावक जो सघ मभारि, करें विघन तिह देहु निकारि।
सर्प डसे जो निज श्रांगुली, दूरि किएं सु वचे विधि भली ॥३२२॥
सम्पक दसर्गं करिहू सुद्ध, थोड़ो ही तप करत सुनुद्ध।
ताही तपते किटहै कर्म, ताते पालहु समिकत धर्म ॥३२३॥
समिकत ग्यान चरित को मूल, या विनि मुक्ति न ह्वं श्रमकूल।
मोषि तगों निज साधन ऐहु, श्रौर नही है भिव लिष लेहु ॥३२४॥
प्रतिकमगों फुनि लोंच करंत, चौदिस झाठे श्राय पड़ंत।
तो तिथि है सराहिवा जोग्य, इनमें कारिज होय मनोग्य ॥३२४॥
जिह जिह वातां मैं गुगा घगों, ह्वं ताकों वलवांन सु गिगों।
या ते सबही तिथि मैं जांनि, चौदिस झाठे है स्रति मांनि॥३२६॥

३१७: ३ उत्तम।

३१८: १ जे।

३२०: १ चित्रहु।

३२१ १ मुख्य । २ यह ।

३२३ : १ दर्शन।

३२४: १ लिख।

३२५: १ प्रतिक्रमणों।

३२६ १ जिहि।

जिन जनमादिक तिथि फुनि क्रिया, वहुरि महींना सो मुिष लिया।
जोग करण श्रर वार निषत्र, ऐ प्रधान मित गिराह विचित्र ॥३२७॥
चववा दें घटिका निसि रहई, तव पूर्वान वदना चहई।
दोय घड़ी मध्यान कराही, प्रभु-वंदन किर मन हरषांही ॥३२८॥
ध्यारि घडी को है श्रपरांन, किर वदना यहै परमांन।
नमं श्राव नजिर निषत्र, तव समायक तजह विचित्र ॥३२९॥
धर्म-काजि तिथि श्रधिकी होय, सो ही कांम तर्गी गिरा लेहु।
श्रादि श्रंत मध्य को मेद, किर सक्कित ते तजो विनि षेद ॥३३०॥
जिहि तिथि विषे जु किरिया कोजे, वह किरिया ही मांनि कहीजे।
क्रिया करगा को ह्वं निह काल, ग्रामादिक कों ह्वं जो चाल ॥३३१॥
तौ घटिका है पहली क्रिया, किर लीजे दूषन निह भिया।
जो प्रमाद किर मूिल गऐहु, तौ घटि है पाछं किर लेहु ॥३३२॥

दोहा . दिनि <sup>९</sup> घटिका छह चढि चुकै, तव स्वाध्याय सु **श्रादि ।** किरिया सारो कीजियौ, पहले करहु न वादि ॥३३३॥

चौपई: भाषत ईद्रनिद मुनिराय, पूर्वाचार्यनु कौ मत पाय।
योडो सो मारग यह कहाौ, जो विस्तार लष्यौ तुम चहाँ ॥३३४॥
ती वनके जो कीन्हे गृंथ, तिन में देखि लेहु सुभ पथ।
तीर्थंकर-मत कौ श्रभिप्राय, सर्व कौंन किर जान्यौ जाय॥३३४॥
ता ते वन की श्राप्या संत, मानै ते सुष लहै श्रनत।
या भव पर-भव-फल सुभ पाय, किम-किम सिव पहुचै जाय॥३३६॥
श्रैसे सौभा किर वह मुनी, इँद्रनिद श्राचारिज गुनी।
जग माहि जयवंतौ रहै, फुनि कैसौ है सौ किव कहै॥३३७॥

कितः परमत-वादी गजघटा दूरि करिवे कों, वांनी जाकी जगत में सिंघ के समांन है।

३२८ . १ पूर्वाह्म।

३२६. १ ग्रपराह्म। २ नम।

३३० १ ग्राधकी।

३३१ १ प्रामातर।

३३३ , १ दिन ।

३३४ १ उनके। २ A जोन्यौ I

**३३६ १ उनकी।** 

पुनि वहु जानत पदारथिन के सरूप,
देविन के मांनि धारे निमत सुग्यान है॥
कुंदकुंदाचारिज गुरू के पद-सेवन ते,
ं श्रागम श्राचार गृंथ मांभि सावधांन हैं।
वै ही इद्रनंदि रच्यों संसक्रत नीतिसार,
भाषा वषतेस करी ताही के प्रमांन है॥३३८॥

## ग्रथ विसंघ उतपति-वर्नन

दोहा: यां ही मत्ता मैं नीसरे, संघ जिते जो ग्रौर।
तिनहूं की उतपति वहुरि, सुनहु ठिकांनों ठौर ॥३३६॥
ग्राभा यन मैं पाइयतु , कछुक यक जैन प्रकास।
ता ते इनकौं मुनिनु मिलि, भाषे जैनांभास॥३४०॥

## श्रथ संघ-नांम-वर्नन

दोहा: इक स्वेतांवर सघ फुनि, दूजौ द्रावड़ जानि।
ज्यायनीय ग्ररु कासटा, निपछ पंचमौं मांनि॥३४१॥
तिन मै ते जे नीकसे, मत कितेक हठ ठांनि।
तिनहूं की ग्रागै कछू, किहहौं कथा वषांनि॥३४२॥
निकसे स्वेतांवर पथम, जे जे ठानी रीति।
कहौं गृंथ ग्रमुसार ते, सुनिऐ भिव किर प्रीति॥३४३॥

# श्रथ भद्रवाहु चरित्रे न उक्तं

दोहा: भद्रवाहु के चिरत मैं, जे भाषी मुनिराय।
सौ सव वाही गृथ की, भाषा घरी वनाय॥३४४॥
गोवरघन मुनि के भये, भद्रवाहु सिषि सार।
पाठी ग्यारह श्रंग के, चवदस पूरव घार॥३४४॥
तिनके सिंग सदा रहें, मुनि चौवीस हजार।
नगर श्रवंती के निकटि, मालव देस मभार॥३४६॥

३३६ . १ मत ।

३४०: १ पायइतु । २ यक ।

३४५ . १ घउदस ।

या नगरी उजेिंग की, चद्रगुप्ति नृप नाम।
धर्म-ध्यांन में निपुन निज, बहुरि देस पुर ग्राम ॥३४७॥
एके निसि सोलह स्वपन , लघे जवें महाराजि।
ग्राय सबै मुनि कीं कहे, फल पूजन के काजि ॥३४८॥
भद्रवाहु भाषी नृपति, फल सुनिऐ चित लाय।
ग्रावत देंह ग्रव काल में, ग्रेसें ह्वं है राय॥३४६॥

### सोलह स्वपन '-वर्नन र

छ'द गीता: स्वर-वृक्ष की साथा थिरत देषी स्वपन मैं मूप,
फल यह सुनों श्रागे नृपित दीक्ष्या घरें न श्रनूप।
सूरिज लब्यो जव श्रस्त होत सु काल पचम माहि,
मुनिराज ग्यारह श्रंग चौदह पूर्व घर ह्वं नाहि॥३४०॥
दोहा: चन्द्र जु देख्यो छिद्रजुत, ताकौ फल यह जानि।
जिन-मत मांभि श्रनेक मत, फटि हैं लीजे मानि॥३४१॥

छंदगीता: तुम सर्पं वारह फरण तर्गों, देख्यो ग्रहो भूपाल।
फल लषहु वारह वरष को, पिंड है वहुर भिष-काल॥
उलटो विमांन जु लिंध्यों, जात सु रहै पंचम काल।
ता में विद्याधर स्वरं मुनी, चारण न ग्राविह हाल॥३५२॥
ऊग्यों लिंध्यों रोंड़ीकमल सो, वैस्य जिनकों धर्म।
पालि है फुनि छत्री सु, ब्रांह्मण तर्ज जिन ग्रासमं॥
नांचते देखे मूत सो नर से यहें स्वरं नीच।
ग्राग्या तर्गों देख्यों उद्योत सु जिन घरम के वीच॥३५३॥
उपदेस जिन-भाषित करन वारे कहुं कह होय।
मिण्यत जें है फैलि सो यामें न ससय कोय॥
देख्यों सरोवर वीच में सुकों सु पार्गी ग्रत।
फल सुनहु जन्म कल्यान ग्रादि सुषेत्र जानि महत॥३५४॥

३४७ १ चद्रगुपति ।

३४८ १ सुपन। २ बूभन।

३४६ १ भ्रव इह।

३५० १ स्वप्न । २ फल बर्नन।

**३ंप्रे**२ १ सरप । २ सुर

इंप्रुं३ १ षित्री। २ सुर।

सो ही जुतीरथ जांनि फुनि जेनी न ह्वं तँह कोय। जिन-धर्म दक्षिरा दिसि रहैगौ जाय हे भवि लोय॥ के थाल में षाती लब्यों ते षीर। कूकर कनक फल जांनि छोटी जाति लिषमी वांन ह्वं हैं वीर ॥३४४॥ गज परि ' लष्यो मरकट चढचो फल यहै कुल जे हीन। ह्र भूप तिनके दास उत्तिम कुल तर्गो ह्व दीन॥ मरजाद तजत लष्यो उदिघ सो श्रव जु ह्वं भूपाल। थ्रन्याय करि लिखमी सवनि की हीं हि घूटनवाल<sup>२</sup>॥३५६॥ वोभ कौ रथ वाछडे पैचते देषे सुद्ध। फन तरुग वर्कादिक करे नहि करे जे ह्वं वृद्ध ॥ सूत लब्यो नृप की चढघो ऊट<sup>२</sup> सु फल जिके नृप लोय। निज घर्म तजि हिंसादि-कर्म सु कर्राह लज्ज्ञा षोय ॥३५७॥ देषी हकी नृप घूलि तं रतनां तराी जो रासि। फल मुनी श्रापस मांहि करि हैं ईरषा परकासि॥ फुनि जुद्ध-काले गजनि कौ देख्यो सुफल ये मेघ। वृष्टि मनवंछित करें रहिवो करें उद्वेग<sup>२</sup> ॥३५८॥ नहि

दोहा .

फल यम सोलह सुपिन कौ, सुनि नृप भये उदास।
चित वैराग विचारि कै, दीक्ष्या ले मुनि पासि ॥३४६॥
रहन लगे सब संग हो, करत तपस्या घोर।
फुनि जु भई सो हू सबै, सुनहु कथांनक श्रौर ॥३६०॥
ऐकैं दिवसि श्रहार कौं, श्रावग कै घरि जाय।
तहां ऐक श्रचिरज लिप्यो, भद्रबाहु मुनिराय ॥३६१॥
लिरका देष्यो पालने, वोलन की विनि सिक्त।
जाह जाह श्रैसे कही, ह्वै मुनि श्रचिरज-जुक्ति ॥३६२॥

३५५ १ लषमी।

३५६ १ पर। २ लूटनवाल।

३५७ १ वरतादिक । २ ऊंट ।

३५८ १ लषी। २ उवसेग।

३५६ १ दीक्षा।

३६०: १ कर।

३६१ १ भ्रचिरिज।

३६२ . १ जुक्त।

वूभी लरिका ते मुनि, याकी श्रविघ वताय। लरिके फुनि मुख ते दये, वारह वरष जताय ॥३६३॥ श्रंतराय करि के फिरे, उलटे ही मुनिराय। श्राये वन मैं संघ-मिष, करत विचार सुभाय॥३६४॥

चौपई : ताही समये निमत विद्यारी. भद्रवाहु वोले तिह वारी।
सव ही मुनि सुनिये गुनपाल, परिहुँ वारह वरष दुकाल ॥३६४॥
ता तै दक्षिण दिसि कौं चले, वा दिसी धर्म सधैगो भले।
तव वनमें तै आधे मुनी, साची मांनी जो गुर-भनी ॥३६६॥
तिन मैं भद्रवाहु अनगार, दूजे चन्द्रगृप्ति ह्वं लार।
ऐ तौ है उछांन वन गये, लिख इक गुफा तास हिगि रहे॥३६७॥

दोहा: भद्रवाहु तौं श्रवधि लिष, लियो सकल सन्यास। तप करि काल षियावहीं, करि करि के उपवास ॥३६८॥

चीपई: तहां करत दोऊ उपवास, काल विपावत घारि हुलास।
फुनि मुनि भद्रवाहु यह कही, जो पुर ग्राम नगर ह्व नही ॥३६९॥
तौ श्रहार की विन मुनि जाय, जोग मिले तौ तहा कराय।
असे कही जिन्।गम माहि, सो हू करिये दूषन नाहि॥३७०॥

सोरठा: यह सुनी गुर के बेन, चढ़गुपित वन जात निति।
तव ग्रहार कों देन, वन देवी इक ग्राय करि ॥३७१॥
कवहू भोजन ठांनि, अंतरीछि वह ह्वं गई।
कवहु ग्रकेंली ग्रानि, वैठी भोजन देन कों ॥३७२॥
इँह विधि लिख मुनिराय,अतराय करि करि फिरे।
तप किय मन वच काय, काहू भाति चिगे नही ॥३७३॥
गाढ परीक्षा माहि, लिख देवी नगरी रची।
तहा ग्रहार कर्राहि, मायामय श्रावगनि के ॥३७४॥

३६३ १ फिरि। २ बताय।

३६६ १ सधैगौ। २ उनमें।

३६७ : १ चद्रगुपति । २ उद्यान ।

३६६ १ ग्राम।

फुनि कछु काल षिपाय, भद्रवाहु सुरगनि गये।
गुर-पादि कराय, चंद्रगुप्ति पूज्यो करे ॥३७४॥
कवहु ब्रहारहि जात, कव हू वपवास हि करे।
तप करि कर्म षियात, इस वीते वारह वरष ॥३७६॥

चौपई : भ्रौर विसाषाचारिज भ्रादि, सिषि हजार वारह कछु वादि। सव ही दक्षरा दिसि की जाय, पाल्यो धर्म सु मन वच काय ॥३७७॥ वीते श्रविघ विसाषाचारिज, संघ जुत जहां पादिका-वारिज। श्राय पूजि पादिका जुपति<sup>९</sup> सौं, चंद्रगुपति मुनि मिले भगति सौं ॥३७८॥ वूभी तुम श्रहार किंह रीति, वन मैं लेत कही करि प्रीति। चद्रगुपति कही नगर वसंत, वन मैं तहां ग्रहार करंत ॥३७६॥ फुनि जे ग्राये मुनि विनि वास, तिनु तिह दिन कीन्ही वपवास ।। दिवसि पारेेें। के श्रनगार, किते गये पुरि लैन श्रहार ॥३८०॥ तिन मैं यक पोछी धरि तरु पै, लेय श्रहार गयो वन गुर पै। यादि थ्रा गई पीछी जव ही, उलटौ लैन चल्यो वह तव ही ॥३८१॥ तरु परि पीछी लषी महांन, लष्यो न पुर की श्राही ठांन। तव यह वात सबै गुर पासि, श्राय कही जिम भई प्रकासि ॥३८२॥ वोले गुर तुम विना विचार, लीन्हों मायामई ग्रहार। पै तुम चद्रगुपति घनि मुनी, गाढे रहे धर्म मै गुनी ॥३८३॥ तुम्हरौ लिष के गाढ अपार, देवि जुक्ति सीं दयो श्रहार। पै यार्को यह प्राछित भयो, सो तुम मुनि-पद घारो<sup>९</sup> नयो ॥३८४॥ करि छेदोपसथापन नवै भे, दीक्षा लीजे फिरि तुम स्रवै । तव ऐ गुर के उर घरि वैन, दीक्ष्यार चंद्रगुप्ति लई अन ॥३८४॥

३७५ १ पादिका । २ चद्रगुपति ।

३७८ ' १ जुगति।

३८० १ उपवास १

३८१ : १ इक ।

३८२ १ श्राई।

३८४ १ घारौ।

३८५ १ जबे। २ दीक्षा।

भ्रौर मुनी जे लारे गये, तिनहं सवने प्राधित लये। जयाजोग्य गुर-श्राग्या पाय, तप कीन्हों तिनु मन वच काय ॥३८६॥ नही गये दक्षिए। दिसा, रहे यहां मुनि संत। थूलभद्र फुनि रायमल, इन दै म्रादि महंत ॥३८७॥ चौपई रहे मुनी जे विना विचार, यही मालवा देस मक्तार। दुरभष्य पडचौ सु ससय नाहि, श्रति भयभीत भये मन मांहि ॥३८८॥ नगरी मैं ग्रहार कौं जाय, मूखे मनिष लगे तहां श्राय। करि ग्रहार यक मुनी निसंक, ग्रावत लिष दौरे वहु रंक ॥३८८॥ सव मिलि वाको पेट विदारि, षायो काढि जुलयो ग्रहार। तव श्रावकिन सुनी यह वात, कंपन लगे जानि उतपात ॥३६०॥ जाय मुनिनु सौं विनती करी, ग्रहो सुनहु हम यह चितधरी। लाठी पात्रा राषो हाथि, ले ग्रहार जावो मिलि साथि ॥३६१॥ वन में भोजन करिये भले, तो ऐ रंक टले तो टले। असें हू कितेक दिन कीन्ह, तौ हू रंकिन श्रति दुष दीन्ह ॥३६२॥ तव फिरि पचन मिलि यम कही, निसि भोजन ले जावो सही। प्रातः श्रहार करो मुनिराज, सीत उक्ष्म<sup>9</sup> की करहुँ<sup>२</sup> न लाज ॥३६३॥ अैसे करत ऐक निसि मुनी, ग्राऐ इक श्रावग कै गुनी। डरि इक तिय राक्षस-सम हेरि, गर्भ गिरघो ता को तिह वेरि ॥३६४॥ यह फुनि सुनि पंचनि मिलि ग्राय, करि मुनिनु ते ग्ररज सुभाय। हे महाराज्य सुनौ श्रव ऐहु, श्राघो श्राघो कंम्मल लेहु ॥३९४॥ सिर परि धारो वेठो ताहि, तौ हमरो यह दुष मिटि जाहि। तव असे ही वनु मिलि करी, मरजादा सव ही परहरो ॥३६६॥ सव मिलि करी न काहू चैहरखों, तव ते ग्रर्धफालक-मत ठेंहरचो। या विघि सौं म्रहार ले जांही, वन मैं सीली भोजन षाही ॥३६७॥ तौहू रक वहां विल जाय, दुष दे षोसि ग्रहारहि षाय। तव श्रावकित यह विघि सुनी, विनयें तुम दुष पावत मुनी ॥३६८॥ गये नगर में तिनहि लिवाय, ठौहर सवको दई बताय। पांच सात मिलि इकठां रहें, भोजन विहरि ल्यात जो चहें ॥३६६॥

३६३ १ उद्या २ करी।

३६७ : १ सीलो ।

३६८ उहां।

जुड़ि किवाड़ सव मिलि जीमंत, सो विधि चली जात प्रवसंत ।

वारह वरष विताये येम, फुनि ग्राये मुनि घारी नेम ॥४००॥
दिष्ण तें जु विसाषाचारिज, मुनि दे ग्रादि करत सुभ कारिज ।

तिन पे थूलभद्र फुनि सव मिलि, सिक्षि एक कों कही जाहु चिल ॥४०१॥
देषहु चलन घमं सव वनकों , ज्यों ससय भाजें सव मन कों ।
वह सिषि गयो मुनिनु के यांही, करी वंदना मन हरषांही ॥४०२॥
वनु प्रति वंदन कीन्ही नांही, वह वलटो ग्रायो वन यांही ।
सवे हकीकित वनकी कही, थूलभद्र वोले तव यही ॥४०३॥
प्राछित ल्यो गुरभाषित सवे, किर छेदोपसथापन ग्रवे ।
सव ही मिलि के दीक्ष्या लेहु, यहां रहे सो विनि सदेहु ॥४०४॥
तव सव कही ग्रवे मुनि-ईस, सिह न सके प्रीसह वाईस ।
तिनके नाम वहुरि विधि सुनों, कैसें सहें सु तुम हीं भनों ॥४०४॥

सोरठा :

षुध्या त्रषा श्रह सीत, उक्ष्म दंस मंसक वहुरि।
नगनपनी स्रित भीत, ऐ षट कैसे सिह सके ॥४०६॥
स्ररित परीसह जांनि, घर सूने मिंघ घ्यान दे।
जीवदया जिय ठांनि, पिछले भोग न चितने ॥४०७॥
स्त्री-परीसह ऐह, सहस स्रठारा वाङ्जित।
सील घरे निज देह, तिय निरषन वोलन तर्ज ॥४०६॥
चर्या यह तू जांनि, चले पयादे मग निरिष।
कंटक भागे स्रांनि, तौहू रहें उवांहने ॥४०६॥
निषद्या है यह ठीक, चले जात रिव स्रस्त ह्वं।
तिह ठांही तैह तीक, वैठी जांहि निसि वीर मुनि ॥४१०॥
सज्या-परीसह जोय, ह्वं घरती कंकर तर्गा।
ऊंची नीची होय, तापे सोने निसक मुनि ॥४११॥
यहै जानि स्राक्रोस, मरमछेदि निदा करें।
नाहक दे को दोस, क्रोघ न करें सने सहै ॥४१२॥

४०२ ' १ उनकौ।

४०३ १ उनु। २ उन। ३ उनकी।

४०४ १ सर्ब। २ दीक्षा।

४०६ . १ त्रिषा।

वघ जु सस्त्र की घात, करें कोय सो सव सहै। यह जाचनां विष्यात, काहू पे मांगे नहीं ॥४१३॥ यह ग्रलाभतू जांनि, भोजन जवै मिले नहीं। तव मन मैं दुष म्रांनि, कोप विलाप करें न मुनि ॥४१४॥ रोग-परीसह ऐह, महारोग करि ग्रस्त हुं। जो भ्रपनौं निज देह, तौ करिवो न कहै जतन ॥४१५॥ त्रिरा सगरस सुरिए मित त्रिराां वहुरि कटक भ्रधिक । लगै देह के संत, टाले नांहीं दुष सहैं ॥४१६॥ मल-प्रीसह सुनि जान, लागे मेल सरीर कै। तऊ न करे सनांन, वाकों भूषन-सम गिने ॥४१७॥ पुरसकार सतकार, ऐक जांनि को काज मै। विनय न करें लगार, तौ श्रपमांन सहै मुनी ॥४१८॥ प्राया भुनहु सुजांन, श्राप पढघो ह्वं वहुत जो । तौ न करैं अभिमांन, सांत-भाव राषे सदा ॥४१६॥ यहै कहैं भ्रग्यांन, जो निज होय प्रवीन भ्रति। क्रोघ न करें प्रमान, जो कोऊ मूरिष कहै॥४२०॥ यहै श्रदरसण् ठीक, ग्यांनवांन निर्ज तप करत। रिधि नहि होय नजीक, तौ न विचारै वात यह ॥४२१॥ में असो तप कीन, तौ हू रिद्धि न उपजी । यह न विचार दीन, तप दीक्यादिक भूठ है ॥४२२॥

दोहाः श्रहो हम् रे, नाय तुम, थूलभद्र मुनिराय। हम ते ऐ प्रीसह ग्रवे, सही कौंन विधि जाय॥४२३॥

चौपई . तव वन कही ये पेट तौ भारी हों, श्रिगल जनम नरिक ही परिहों।
यह सुनि सव मिलि वात न मानी, वा सौं बुरी करी मन मानी ॥४२४॥
वह मिर प्रेत भयौ सब जांन्यों, सबकों दुष दीन्हों मन मान्यों।
तब वा सौं मिलि विनती कीन्ही, तुम दुष देत सु सब हम चीन्ही ॥४२५॥

४१६ १ प्रग्या ।

४२२ १ रिधि। २ ऊपजी।

४२४ १ मरि।

भ्रव हम अपरि किरपा कीजे, जिह विधि चलें सु चिलवा दीजे। तौ हम पाय पूजि निति तुम्हरे, जीमै हौ तुम सितगुर हमरे ॥४२६॥

- दोहा : जन तै पूजत प्रथम ऐ, घरि पाटी परि पाय। कोऊ म्रस्ति नतांनहीं, पूजत मन नच काय॥४२७॥
- चौपई: म्रार्धफालक सव देसिन मांहि, फैल्यो मत यम संसय नांहि।

  असे काल वितीतों घर्गो, वरष सेकड़ा फुनि तुम सुर्गो ॥४२८॥
  भऐ उजेर्गो विक्रम भूप, माता पद्मावती प्रतूप।
  गंध्रवसेन पिता तसु जांनि, हो विद्याघर वह गुनषांनि ॥४२६॥
  विक्रम प्राकर्मी चहु घनी, घर्मवांन दांनी वहु गुनी।
  तिनु बुलाय पंडित रिष सर्व, निम विनती म कीन्ही जवै॥४३०॥
  संवत्त नयौ चलावन तनों, मेरे भाव उपज्यौ घनों।
  वै वोले भगरौ पाछिलो, मेरे संवत चिल है भलौ॥४३१॥
- दोहा : लेन देन वोरन कों, धन दै कलिह भिटाय । तिह विक्रम भूपित नयौ, संवत दयो चलाय ॥४३२॥
- चौपई . फुनि विक्रम तौ सुरपुरि गऐ, केते वरष वहुरि वीतऐ । वरष ऐकसौ भऐ छतीस, तवे वजेग्गीं भऐ महीस ॥४३३॥ चंद्रकीर्ति हौ ताकौ नांम, चंद्रसिरी भई ताकी वांम । तिनकै सुंदर पुत्री भई, नांम चंद्ररेषा गुनमई ॥४३४॥
- दोहा : ताहि पढाई सूप वन, श्रर्थफालकनि पासि।
  सांतिकीर्ति कौ सिध्य हुतौ, जिग्गचंद नाम प्रकासि ॥४३४॥
  सौ तौ कनवज देस कौं, गऐ सु ताहि पढाय।
  फुनि कन्यां जोवनसहित, देषी जव ही राय॥४३६॥
  सुन्दर सोरठ देस मैं, वलभा नगरी जांनि।
  प्रजापाल नृप कै तिया, प्रजावती गुनषांनि॥४३७॥

४२६: १ पदमावती ।

४३०: १ इम।

४३१ . १ मेटै।

४३२ . १ कलह। २ मिटाइ।

४३३ . १ उजेराीं।

लोकपाल ताकौ नतय, ताहि दई परएाय। सिसरेषा कन्या वहै, हय गय दे वह चाय ॥४३८॥ प्रजापाल सुरगनि गयी, लोकपाल हुव राज। काह दिनि श्रति प्रस्त किष्, तिय वोलो तिज लाज ॥४३६॥ ग्रहों भूप मेरो<sup>े</sup> जु गुर<sup>२</sup>, है कनवज के देस। ताहि बुलाय यहां भ्रवं, कीजे<sup>3</sup> भक्ति विसेस ॥४४०॥ नृप मन्त्री नु षिनाय करि, लीनें तिन्ह<sup>े</sup> वुलाय। साम्हें चाले भूप हु, त्यावन की चित चाय ॥४४१॥ लिख वन को वह रूप जव, नही वस्त्र कछु । पासि । नही दिगांवर इस्प यह, नृप तव भऐ उदास ॥४४२॥ विचि ही ते श्राऐ सु उठि, वन पे गऐ न राय। तव नूप को रागी सबै, जांनि लयौ अभप्राय ॥४४३॥ मंत्रिन को विनवाय करि, राशि वन के पासि। स्वेत वस्त्र लाऐ तिन्है, वहु विधि करि ग्ररदासि ॥४४४॥ तव नृप साम्हे जाय फुनि, ल्याऐ नगरी माहि। भक्ति करी जिराचद की, भाव-सहित ग्रधिकांहि ॥४४५॥ तव तं मत ठहरचौ यहै, स्वेतावर भु कहात। भद्रवाह के चरित में, भाषी है यह वात ॥४४६॥ फूनि चौदह उपकरण ऐ, नऐ नऐ ठहराय। यनके भत के जतिनु कौं, राषन दऐ वताय ॥४४७॥

#### उपकर्ण-नांम

दोहा:

राषौ तीन पछेवड़ी, वहूरि घोवत्ती तीन। पातरा काठ के, लाठी ऐक नवीन ॥४४८॥ तीन बोघा दोय जु ऊंन के, ऐक मींहपती जोरि। पात्रा के मुषि वाधर्गी, ऐक तर्पर्गी डोरि ॥४४६॥

१ प्रश्न । 358

१ मेरे। २ जगुर। ३ कीज्ये। ४४०

४४१ : १ तिनहि।

१ कछू। २ पास। ३ दिगंबर। ४४२

१ लियौ । २ ममिप्राय । **ጸ**ጸ3

१ स्वेतांबर ।

४४७ : १ इनके ।

ऐ सब चौदह उपकरण, राषण मै नहि दोष।
श्रेंसें कहि सबकों कियो, मत स्वेतावर पोष॥४४०॥
नऐ वनाऐ गृंथ वहु, आगम वहुरि सिघांत। तिनमै भाषे सो कछुक, सुनिऐ भवि विरतांत ॥४४१॥

चौपई : जनम कल्यानक पूजा करें, स्रांगी रिच जग कौ मन हरें। देहुरांनि कौ चलन मिटाय, उनासिरा दीन्हे ठहराय ॥४५२॥ प्रतिसां प्रभु की थापं जहां, जुड़ि किवाड़ भोजन ले तहां। फुनि गृंथनि में जो विगरीति, भाषी सो सुनिएँ करि प्रीति ॥४५३॥

सोरडा: ऐ चौंरासी वोल, नऐ सथापे वहसि करि। तिनकी कथा कलोल. कछु यक यह वर्नन करूं र ॥४५४॥

श्रथ चौरासी बोल परि हेम क्रत छंद छंपै।। कवित्त : केवली श्रहार करें माने तिन्हें लागत है, दूषन ग्रठारै परमाद महा मोहिए। मोह के विनासकारी वीरज श्रनंत घारी, जिन्हें भूष लागे असे कहत न सोहिऐ॥ भुजत श्रनंत सूष भोजन तं कौंन काज, **ग्रादित के उदे कहाँ कहा दीप वोहिऐ।** परकार इनकै न कवँला ग्रहार, जे कहै है तिनके जग्यों है ग्यांन को हिऐ ॥४५५॥ मोहनी करम नांसे वेदनी की वल नांसे. विसके विनासे ज्यो भुजंगम की हींनता। इंद्रीनि के ग्यांन सीं न सुष दुष वेदे जहां, वेदनी कौ स्वाद वेदै इँद्रीनि की षीनता॥ श्रातमीक अतर भ्रनंत सुष वेंदै जहां, वाहरि निरतर है साता की स्रछीनता।

४५१ १ म्रागम । २ विविरतात ।

४५४ . १ वरनन । २ करों।

४५५ १ missing 1

४५६ . १ विसकी ।

तहां भूष ग्रादिक ग्रसाता कहां वल करं,

विष किंगा कान करं सागर मलीनता ॥४५६॥
देव मानसी कही ग्रहार ते प्रपित होय,

नारकीक जीविन को कमं को ग्रहार है।

नर तिर जच के प्रगट कवला ग्रहार,

ऐक इंद्री धारक के लेप को ग्रधार है॥

ग्रड़े की विरिधि ह्वं उजाग्राहार सेवन ते,

पंषी उर अंघमा ते ताकी वढ वार है।

नौ कमं वर्गनां को केवली के है ग्रहार,

देह ग्रविकार कहै जो न सिवकार है॥४५७॥

- दोहा: ग्रीर जीव कै लगत निह, तन पोषक सुषदाय। समय समय जगदीस कै, लगे वर्ग नां श्राय ॥४५८॥
- छुप्पे : षुघ्या त्रषा भय दोष रोग जर मरण जनम मद।

  मोह षेद पर स्वेद नींद विसमय चिंतागद॥

  रित विषाद ऐ दोष नांहि श्रष्टादस जाके।

  फेवल ग्यांन श्रमत दरस सुष वीरज ताके॥

  निह सप्त घात सब मल रिहत परमो दारिक तन सहित।
  अंतर श्रमंत सुष रस सरस सो जिनेस मुनिपित महित॥४५६॥
- दोहा : कलप विकलपी कहत हैं, ग्रौर दोष विकराल।

  निरमल केवल नाथ कै, है निहार मल जाल ॥४६०॥

  जाहि ग्रहार वने नही, तँह क्यौं होय निहार।

  परगट दूषन देषिऐ, इसमै कौन विचार॥४६१॥
- चौपई : जे मुनि तपित रिद्धि के धारी, गहत ग्रहार हिये न निहारी।

४५७: १ त्रिपति । २ प्रकार । ३ उजाहार । ४ वर ।

४५६. १ त्रिया। २ ज्ञांन।

४६०. १ कलिप । २ लाज।

दोहा : जाकौं देषि मिटै विकट, घोर उपद्रव वर्ग । दोष दोय ताकै कहै, रोग श्रौर उपसर्ग ॥४६३॥

कित : कहै कोऊ क्रोघसाला हुवौ है गोसाला मुनि,

तिन ते ज्वाला-माला छूटी परजलती।

वीर के समोसरन दिह मुनि दोय तिन,

ताकी भल रवामी हूं को पहुंची उछलती॥

तहां भयौ उपसर्ग ताही ऊषमां ते फिरि,

उदर की व्यावि भई श्रांम लोहू चलती।

परगट दोष जानि तर्ज श्रैसो सरधांन,

ग्यानवांन जिनकै सु जोति जगी बलती॥४६४॥

दोहा: जनमत ही मित श्रुति श्रविध, तीन ग्यांन घट जास।
कहें पढ़िंची घट साल स्यों, वर्द्धमान गुनवास ॥४६४॥
कहें श्रौर सितवास मत, जब जिन होय विराग।
एक वरस लों दान दे, श्रंत करें घर त्याग ॥४६६॥
जिन वैराग्य दसा धरत, त्यागे सब परभाव।
कहा जानि श्रपनौं करें, पाछें दान वताव॥४६७॥
घरी दिगंवर जिन दसा, पाछे श्रंवर श्रानि।
ईंद्र घरें जिन कंघ पर<sup>9</sup>, यह संसय मित मांनि॥४६८॥

चौपई छद गराधर विनां वीर की वांनी, निफल षिरी नही<sup>े</sup> काहू मानी । वेसरि<sup>े</sup> : समकित वृत का भया न घारी, कोऊ तहां कहै सविकारी ॥४६९॥

दोहा वांनी षिरयन धिर यतौ, होय सफल तैहकीक । षिरै फल विनां जे कहैं, तिनकी वात स्रलीक ॥४७०॥

श्रिरिल : लोकनाथ सौ जिनवर जाकौ पूत है, तिस माता कौ कहीं भ्रोर परसूत है।

४६३ १ वर्ग।

४६४ १ क्रोधसला ।

४६८ १परि।

४६६ : १ Missing । २ निह । ४७० : १ षिरैन । २ तहकोक ।

श्रादिनाथ कौं प्रगट कहत हैं जुगलिया, तिनकों ही फिरि कहैं भये ते पति तिया ॥४७१॥

चौपई । कहै जुगलिया कोऊ मूवो, ताकी तिय हि रड़ायो हूवो। सोही रिषभदेव धरि श्रानी, भई सुनंदा दूजी रानी॥४७२॥

सोरठा कराहिन विदक काजु,जो सांमीनि के होय जन। क्यों करिश्री जिनराज, करें स्रकारिज विधि करम ॥४७३॥

छुप्पै : कोऊ कोऊ कहै रिषभ थौ विप्र तास तिय।
देवा नंदा तासु गर्भ जिनवीर श्रवतिरय॥
दिन श्रस्सी श्ररु तीन लयो प्रभू वास तहां हीं।
तवें ईद्र यह वात विचारी है मन माही॥
हीन जाति हिज कुल विषै, महा पुरुष श्रवतार।
जोग्य नहीं ताते करीं, श्रीर गर्भ संचार॥४७४॥

सोरटा: दियो परवेस, हिरन गवेषी देव को । करवायो परवेस प्रभु, त्रिसला के गर्भ मैं॥४७५॥

नौपई : पहिले गर्भ क्यो न हरि लीनों, गएं तियासी दिन क्यों कीनों।
पहिले का जानत हो नाहों, कहाँ विचारि घारि मन मांही ॥४७६॥

श्रीरल: दुज घरिवा सिद्धारय घरि प्रभु संचरघो,
गर्भ कल्यांनक कहों कहां जिन को करघो।
जो द्विज घरि भौ होय हीनता ईस की,
सिद्धारय घरि न वनै क्रिया जगीस की ॥४७७॥
दूँ दोन्यो घरि तौ कल्यान कछह गर्नों,
जो दोन्यों के न हितौ च्यारघों हो भनों।
सील भंग तौ होय जिनेश्वर मात का,
यातं वीरज नाहि सिधारय तात का ॥४७५॥

४७३. १ करहिन । २ निदिक । ३ सामानि । ४७५ १ दयो ।

दोहा: पंच कुमार जिनेस हैं, सत्यारथ मत मांहि।
मिल्ल नेमि एई कुमर, कहैं है ग्रवर नांहि॥४८०॥
तीर्थंकर जिन कौ नमैं, सांमांनिक जिनिराय।
कहै बाहवलि केवली, नमो वृषभ के पाय॥४८१॥

किवति : ग्रिरहंत पद वंद्य वंदक सरूप मेरो,
ग्रिसे भाव परमाद गुनतांई वहै हैं।
सातमी धराते ग्रागे ग्रातमी करस जागे,
तहां वंद्य वंदक विभाव नाहि रहै हैं॥
साधक दसा में जहां वाधक है ग्रेसा भाव,
तहां जिन जिन वंदे मंद बुधी कहै हैं।
परवा सरूप धारी वीतराग ग्रविकारी,

सवैया ः केवल ग्यांन विषे ज्यन वीर कहैं श्रनजांने श्रचांनक छीक्यो । सो न वनै जव छींक उठै जव वात कफा मय व्यापत जी कों ॥ घातु विर्वाजत निर्मल ईस सरीर विषै नही रोग रती को । छींक कलंक श्रटंकित श्रंकित शुद्ध दसा तहां दोष नहीं को ॥४८३॥

वंदनीक एकै मानी ग्यांनीसर दहै हैं ॥४८२॥

श्रीरल: तिरदडी तापसी कुॉलगी भेष सौं, श्रावत सुनि जिन वीरनाथ उपदेस सौं। गोतम स्वांमी गराधर वृतधर जैन कौ, ताकै सनमुषि गयो भगति सौं लेन कौं ॥४८४॥

दोहा : घारक संम्यक दरसनी, करें न कुमती मांन । क्यों करि गराघर पूज्य पद, करें सुभक्ति विघांन ॥४८५॥

४७६ : १ तंह।

४८१ . १ रिषम ।

४८२: १ सर्वया । २ श्रातमीं । ३ बुद्धी ।

४८३: १ सर्वया २३ सा।

४८४: १ सनमूष ।

जाकी सोलह स्वर्ग ते, ग्रागे नांहीं गंम्य। तिस नारी कों यों कहें, रमें मोष्य पद रंम्य॥४८६॥

किवत : जाके सब मलद्वार घारें है निगोदि भार,

कवह न ग्रविकार हिंसा ते रहत हैं।

सिथल सुभाव लियें परपंच सच कियें,

लाज कौ समाज घरे ग्रंबर चहत हैं॥

छठे गुए। थांन मांहि थिरता न ध्यांन माहि,

मांस मांस रितु ताहि सकता लहतु हैं।

जगत विलविनी कौ हीन दसालविनी कौं,

यातें ही नितविनी कौ मोषि न चहुत हैं॥४८७॥

दोहा . मुक्ति कांमिनी कीं रमें, एक पुरिष विसेष। रमें न कामिनि कांमिनी, यह परगट ही देव ॥४८८॥

श्रीरल दोहा समय विरोधी देखिऐ, परगट वितय विचार । मिल्लनाथ जिनकों कहीं, मली कुमारी नारि ॥४८६॥

श्रिरिल : सुरग भूंमि पाताल लोक मैं देषिये, नारी नाथ सुनी कवहू न विसेषिये। जगत वंद्य ग्ररहंत<sup>9</sup> देव पद क्यों घरें, नर ग्रधीन जो हीन निदि पद ग्राचरें॥४६०॥

चौपई . जो नारी कौं नर पद मांनी, तो ताकी प्रतिमा किन ठानों।
पुरिष ग्रकार एक ही वंदी, नारी रूप क्यों न ग्रभिनदो॥४६१॥
जो नितविनी विव न सोहै, कुच रूपादिक महित होहै।
ती लज्जा करि कामनि रूपी, क्यों करि जिनवर होय ग्ररूपी॥४६२॥

दोहा जाके दरसरा परस ते, रागादिक मिटि जाय। तिस नर रूपी ईस कों, वंदी सीस नवाय॥४६३॥

४८७ १ लहत ।

४८६: १ missing । २ बिचारि ।

४६० . १ ग्ररिहत ।

४६३: १ दरसन ।

नोपई कहै जुगल हरिषेत्र निवासी, काहू देव हरिंचो सिवलासी।

पूरव वैर दिष दुष दोनों, ग्रवगांहन करि छोटो किनों ॥४६४॥

सोही भरथषंड फिरि ग्रांन्यो, मुथरा नगरी राज दिवांन्यो।

पापी करि तिन मांस षवायो, नरक नगर के पंथ चलायो॥४६४॥

तिसके कुल हरिवंस वषांने, सत्यारथ उपदेस न मांने।

जुगल सर्व ही स्वरगित गांमी, नरक न सेविह रिजु परिणांमी॥४६६॥

तोन कोस की तिनकी काया, स्वर क्यों करि लघु रूप वनाया।

जो तुम इसिह प्रछेरा मांनों, तो भी नांहि वने मिन श्रांनो॥४६७॥

काल श्रनंतानंत भये ते, एक एक ही जुगल गये ते।

सव हरिषेत्र भूमि का षाली, ह्वं कों। मिटं जुगल परनाली॥४६८॥

दोहा: सव गिराती के जुगल है, घटें वढें नहि कोय।

सररा काल ही जुगल कें, श्राय जुगलिया होय ॥४६६॥

राषतु चौंदह उपकररा, मुनि कौं नांहि नु दोष।

परिग्रह त्याग दसा विषं, करें परिग्रह पोष ॥५००॥

जहां प्रमांरां सम नहीं, परिग्रह ग्रह कौं रंच।

तहां कहीं क्यों करि वनें, वस्त्रादिक परपंच ॥५०१॥

कितः काल पाय मैंले होय ग्रासा होय घोवन की,

घोयें नसै संजम ग्रारंभ विसतारे है।

नास भये मांगन को त्रास होय नासन के,

डरतें सु ध्यान विषी थिरता विडारें है॥
देहु द्रुति मडन है ब्रह्मचर्य छंडन है,

जिन लिंग षंडन है तातें पट डारे है।
संवर धरनहार अंवर सौं ग्रविकार,
होय के निरंवर दिगंवरहि घारें है॥५०२॥

४६४ : १ छोटी ।

४६४ : १ सोई।

४६६: १ स्वर्गति ।

४६५: १कै।

५००: १ राषत।

५०२ : १ विस्तारे । २ विशे । ३ विसारे ।

दोहा: समयादिक परजाप कों, काल दर वस मुक्तांहि। काल प्रश् जार्ग नहीं, जै प्रसंख्य जग माहि॥४०३॥

छुपै: काल अर्गू जो नाहि समय तौ होय कहां तै।

मुथिर वस्तु विन नाहि नास उतपित तहां तै॥

असत्त जनम जै होय होय घर श्रंग जगत मै।

बुद्धि होय परमान श्रीर विनभगुर मत मैं॥

नहि सधै वस्तु सीमां विमल जनम नास थिर भाव विन।

थिरत' निमत्त समयादिकी काल अर्गू जिंग कहिह जिन॥५०४॥

कवित: मांने मनसू वृत के गराधर घोरो भयो, काह काज के निमत मांस मुनि गहै हैं। घरि २ विहरि २ श्रंश मागि ल्यावै, कहें मुनि थांन श्रानि भोजन की लहे हैं॥ निज मत निदक को ठौर मारं पाप नांही, निर्देय सुभाव घरि काहू की न सहै हैं। साची बात भूठी कहै भेद बख की न लहें, हठ रीति गहिर हैं मिथ्या वात कहैं हैं ॥५०४॥ भरथ ने ब्रांह्मी वहन कहै नारी कीनी, महासती दोष लाइ भववास चहै हैं। ग्रहवास वसत ही केवली भरय भयो, श्रारसी के मदिर मैं मांनि निरवहै हैं॥ द्रोपदी सती कों कहीं भई पंच भरतारी?, ग्रघ वंघ भारी करि सकट मैं फहै हैं। साची वात भूठी कहैं वख को न भेद लहैं, हठ रीति गहि रहैं मिथ्या वात कहै हैं॥५०६॥ कोऊ मुनि कंघ परि पथ में गुरू कों लियें, चल्यों जात केवली भयो है सरदहै हैं।

५०४ . १ थिरता।

You ? missing !

५०६: १ वहें। २ मई not In A । ३ बस्तु।

कहैं है जवाई वीर नाथ की जमाली नामां, वीर है कुमारो सुनि लरने की षहै हैं॥ ध्रुविक-ध्रुविक किर केवली किपल नांच्यो, मूरिष रिभांवन कीं ग्रेसी मांनि रहै है। सांची वात भूठी कहैं वस्तु को न भेद लहैं, हठरोति गहि रहीँ<sup>२</sup> मिथ्या वात कहै हैं॥५०७॥ कहिं वहुत्तरि सहस भई वसुदेव-वयूगन। छपी: धनुष<sup>9</sup> पंच से उच्च वाहुविल कहें धरचौ तन ॥ सूद्र-जाति-घरि ग्रसन करत मुनि दोष न पार्वे। देव मनुषिएा। भोग-भोग वहि सुरत वढावै॥ इक गर्भ माहि सुलसा घरे, सुत वत्रीस जन भनहि। पहिले त्रपष्टि<sup>२</sup> हरिदेव³ की, नांनां ते उतपति गनहि<sup>४</sup>॥५०८॥ मांनहि वीर विहार ग्रनारिज देस भूमि पर। कहिंह मलेख चतुर्थ काल सारै हूऐ भर॥ देव-कोस से च्यारि-कोस कौ तन ग्रव घारय। प्रांगाघात वृत-भग करत निह पाप विचारय॥ उपवास मांहि वोषदि<sup>1</sup> भषत, वृती न धारहि दोष मल। चौसिंठ-हजार नारी गिने, चक्रवित्त घरि तनु नवल ॥५०६॥ समोसरन जिन नगन नांहि दीसै परवांनहि। म्रविक्रत तन मैं वस्त्र राग-कारए। सरधानहि॥ लाठी राषेँ जती कहै श्रस कर्म वधावहि। गज ऊपरि ही मुंक्ति<sup>२</sup> गई मरुदेवि वतांवहि॥ नारी श्रगम्य<sup>3</sup> दुरघर कठनि पच महाव्रत-पदर्घरहि। निह लहिह दोष वलहीन मुनि वार वार भोजन करिह ॥५१०॥ छंद गीता . दरवित क्रिया विन भावांलग गृहस्थ किदल -पद घरै। चिंडाल-म्रादिक जाति नििंदित मुक्ति तदभव वसि करे ॥

५०७: १ घ्रुवक-घ्रुवक। २ रहें। ५०८. १ घनष। २ त्रिपिष्ट। ३ हरदेव। ४ मनिह।

५०६ ' १ वोषि ।

प्रे १०. १ कर्णा २ मुकति । ३ <sup>८</sup> स्रगाम्य ।

५११ . १ केवल।

म्राभर्गं 'सहित जिनेस-प्रतिमा राग-कारग मांनते। भ्रनमिल वर्षांनहि भ्रौर ठानहि फलपना सर्घांनते ॥५११॥ साभरा भव सनमुक्ति जे हैं मोनि परिगृह हठ गहें। रवि-चद-मडल-मूल श्राया वीर वदन की कहैं॥ साबुती गति मरजाद मेटहि सूर-सिस की जानते। म्रनिमल वर्षानिह भ्रीर ठांनिह कलपनां सरघांनते ॥५१२॥ दूषन भ्रठारह मांहि वदले कहहि स्रीर सवारिक। चौतीस प्रतिसय वदिल फेई गहिह फ्रौर विचारिक ॥ जिनमत-निवासी सौ लरिह मुनि दोष रचनां ठानते। श्रनमिल वर्षांनिह श्रीर ठानिह कलपनां सर्धांनते ॥५१३॥ सीधर्म स्वरपति जीतिवे की चमर वितरपति गयो। तसु वज्रदड विलास-षंडित कहिं<sup>२</sup> वीर-सरिन भयो॥ कर पूरवत मरि गऐं न षिरै जुगल-तनु-परवानते। श्रनिमल वषानिह श्रीर ठांनिह कलपनां सरघांनते ॥५१४॥ निर्वान<sup>1</sup> होत जिनेस-काया षिरे दांमिनिवत नही। वर नारि दे थिर करें श्रावक देखि कामी मुनि कही॥ केवली तनतें जीववध ह्वं कहें मत मद-पानते। श्रनमिल वषानहि ग्रौर ठांनहि कलपनां सरघांनते ॥५१५॥ सुरिंग लै जिनदाढ पूजिह ईद्र जिन जव सिव गर्मै। जिन बीर मेर-श्रचल लायो जनम कल्यांनक समें॥ जिन-जनम-सूचक स्वपन चौदह ख्रौर नहि मन स्नानते। भ्रनमिल वषानहि श्रौर ठानहि कलपनां सरधांनते ॥४१६॥

दोहा: गगादेवी सौं कहै, पचमन वरष हजार। चक्रवांत भरतेस नै, कियो भोग-विवहार॥४१७॥

प्११ : २ ग्रामरसा।

प्रश्२ १ सामरण। २ मुकति।

प्रश्ठ १ व्यतस्पति । २ फहें हि ।

प्रथ् १ निरवान।

प्रद् १ सुपन।

भोग भूंमि छ्यांनवे नगनिह उछेदि के, श्ररिल : चर्म नीर नै दोस न लावहि वेदिक। घृत करि साधित बासी भोजन लेत है, सारे फल कों भुंजत दोष न देत है ॥५१८॥

कवित: रिषभ विरागत निमति नीलजसा नृति , मांनै नांहि देव देवि कीनी<sup>२</sup> जो विधांन की। जीवते विराग ताकौं नांहि घरें, मात-पिता वीर वर्द्धमान जिन गर्भवास म्रांन की॥ वाहुवलि कौं कहैं कि युगल³स्वरूपधारी, हाड पूर्ज कौडे थापि कहै परठांन की। नाभि मरुदेवी कौ जुगलधर्म मानतु है, तिन ही तं जिन-उत्तर्गति सरधान की ॥५१६॥

चौपई : हौंहि जुगलिया सब मलधारी, कहैं सिलाका-पुरिष निहारी। चौसिंठ इंद्र न श्रिधिके जाने, वारह देवलोक ही मानै॥५२०॥ जे जादौँ जिन मारिग पक्षी, तिनकौँ कह मांस के सक्षी। मनुज मांनषोतर के श्रागे, जेहें कहें न दूषन लागे ॥५२१॥

नांही है नाही है काम चौवीस ॥ छद रोडकः श्ररु नव-नवोत्तरे लघु समुद्र मानत नांहो। श्रेरायित भरत तिज षेत्र ऐकसौ साठि माही ॥ चौरासी लष जौंनि हैं, ऐ चौरासी बोल। जे मांने ते मानि हैं, भवसागर-कल्लोल ॥५२२॥

तिनहू ते लौंका ढूढिया, निकसि जुंदे मत कौं थापिया। दोहा प्रतिमा तिनु पूजन तिज दई, दोष कहे यामे अधिकई ॥५२३॥ तिनमें लौंका सुचि तौ रहैं, ढूढ्या महा श्रसुचि॰ कौं गहैं। निह श्राचार विचार न कीय, जाते धर्म ै सबै सुभ होय ॥५२४॥

५१८ १ लेतु। २ देतु।

५१६ १ नृत्य। २ कीनों । ३ मुगल। ५२३ १ चीपई।

५२४: १ म्रश्नुचि। २ घरम।

इनको चलन जगत सव जानें, गृथ माभि ग्रव कहा वर्षाने। परगट दीसत छांनों नांहीं, तातें वरनन कहा कराहीं ॥४२४॥

दोहा : मत स्वेतांवर भें वहुरि, लिष्यत अर्व प्रतछ्छ । फाटे मन मद ठांनि सो, हैं चौरासी गछ्छ ॥

#### कवि वचन

दोषभाव घरि निह कियो, कियो न निज-मत-पोष । सत्यारथ उपदेस यह, करैं सुजन संतोष ॥५२६॥ सत्यारथ वानी प्रगट, घट-घट करैं उदोत । ससय-तिमर मिटैं पटल, वहैं ग्यान सुष होत ॥५२७॥

॥ इति बोल सपूर्ण ॥

श्रथ द्रावड्-संघ-उतपति-वर्नन

दोहा : द्रावड़संघ उत्तपति भई, जिम भाषी मुनि ईस। सवत वीतें पांच से, ऊपरि श्रौर छतीस॥५२८॥

चौपई : मुनि श्रीयूज्यपाव गुनषानि, वज्प्रनंदि तसु चेला जानि ।
पाहुडोनि वेता तन षीए , सर्वसास्त्र मैं महाप्रवीरण ॥५२६॥
इक दिनि चेले क्रोध उपाय, दक्षिरण मथुरा के मधि ग्राय ।
द्रावडसघ नयो ठेहराय , नये नये सिद्धांत वरणाय ॥५३०॥

चौपई । भाषी बीज मिद्ध नाहि । जीव, है प्रामुक निह दोष सदीव। वेती विराज ग्रादि वहु कर्म, किर जीवो यामें न ग्रधमें ॥४३१॥ सीतल जल के करे सनान, तिन के ग्रध ग्रति होत मुजान। इन्हें ग्रादि विपरीति जु वात, किर द्रविड -सध कियो विष्यात ॥४३२॥

प्रदृ १ इवेतावर । २ लिखमत । ३ प्रतछ । ४ गछ ।

४२८ १ उतपति ।

प्र२६ १ पाहुडानि । २ वीन ।

<sup>&</sup>lt;u> ४३० १ दिन। २ ठहराय।</u>

४३१ - १ A missing । २ निहा

<sup>&</sup>lt;u> ५३२. १ होय। २ द्रावड। ३ कीयौ।</u>

### ग्रथ ज्यापनीय-संघ-उतपति भे-वर्नन

दोहा: साल सात से पांच कै, संघ चल्यो श्रघ-घांम।

पुर कल्यांनवर के विषे, ज्यापनीय यह नांम ॥५३३॥

तहां ऐक श्रीकलस मुनि, तिनहूं नये सिधंत।

करि वाते जु घरि सु श्रव, कछुयक सुनौं व्रतंत ॥५३४॥

कलपसूत्र स्वेतांवरनु, नयो वरणायो ताहि।

मानौं पुनि पूजा करो, रतन-त्रय की चाहि॥५३५॥

सोरठा:

मांने दुहुंके वैन, दिग्गंवर फुनि स्वेतपट।

लहैं कौंन विधि चैन, जमीकौ न ग्रसमांन कौ ॥५३६॥

फुनि यह कही ग्रसार, खी जाय पहुचै मुकति।

ले केवली ग्रहार, मोषि लहै सर गृंथहू॥५३७॥

वाते धरि विपरीत, ग्रौर कितेक सिधात मैं।

संघ त्यागि निज रीति. ज्यापनीय परगट कियो ॥५३५॥

### श्रथ काष्टा-संघ-उतपति वर्नन

दोहा: संघ कासटा की भई, उतपति मनो उपंग। साल सात-सै-ज्यागाव, कौ निकस्यो यह संघ॥५३६॥

चौपई: ग्रांम नंदियड़ इक ग्रति वसे, विनयसेनि यक मुनि ते लसे।
ताके चेलो फुमारसेन, भयो मुनी घारक मत्त जैन ॥५४०॥
तिय यक समये घरचो सन्यास, ज्यावत जीव सुठांनि हुलास।
वैठौ एक ठौर मुनिराय, सर्व वस्त को त्याग कराय॥५४१॥
दिन कितेक मैं उपजी ताकों, षुध्यादिक वाघा ग्रति वाकों।
तव वन नहि निज धर्म विचारचो, करि ग्रहार सन्यास विगारचो॥५४२॥

५३३ : १ उत्पत्ति । ५३५ : १ मानहु । ५४२ : १ उन ।

<sup>†</sup>The less popular sect of the Jains, besides the well known Digambara and Svetambara Sanghas Little research has so far been made on the Yapaniya literature Dearth of material coupled with its close affinity with the Digambara sect makes it still more difficult to differentiate between the two However, Kanarese Jain works would come to our aid, when they have been discovered and a proper assessment of the same has been made

फुनि वह वहे मुनिनु पै गयो, सब विरतांत श्रापनों कहचो।
मुनिनु कही फिरि दीक्ष्या लेहु, करि छेदोपसथापन ऐहु ॥४४३॥
वाने विद्यां को मद ठानि, दीक्ष्या फिरि निह लीनी जांनि।
नए साख तिन लये वनाय, प्रतिमां काठ-ताणी वाणवाय ॥४४४॥
भाषी पूजों सब मिलि याहि, वहु मिलि पूजन लागे ताहि।
सुरही गाय पूंछ के वाल, तिनकी पीछी रची विसाल ॥४४६॥
पूजा पाठ नए वाणवाये, श्रागं पीछै दर्व्य चढाए।
मुनि-तिय को दीक्ष्या दे भाषी, देसवृत करिक श्रभिलाषी ॥४४६॥
चर्या वीर करों सहु कोय, श्रमें वहकाये वहु लोय।
प्राछत कहे श्रौर के श्रौर, इन दे श्रादि कुबुधि के जोर ॥४४७॥
करि कितेक वाते विवरीति, मुरिष मत श्राने करि प्रीति।
श्रमें निदस्य मै चाहो, काष्ट्र सघ उपज्यो विधि याहो॥४४८॥
जब वाको गुर हो मुनि महा, श्राय कही यह कीन्हों कहा ।
तव वन कितियक मेटी चाल, कितियक चली जात हैं हाल ॥४४६॥

दोहा: तवही तै कहने लगे, मूलसघ तौ वाहि।
कहें नवीन प्रवीन जन, सघ कासटा याहि॥४४०॥

ग्रय निपिछ्छ-संघ-उतपति-वर्नन

दोहा संवत नौसै त्र्याए।वै, सब निविछ्छ उठांन। मुथरा नगरी मैं हुवो, सो विधि सुनहु सुजांन॥४४१॥

चौपई: मुनि यक रांमसेन वरनयो, समिकत प्रक्रित मिथ्याती भयो।
गुरु ग्रर प्रतिमां जिन-वर तरगी, तिन मैं विगि निकासी घरगी ॥४४२॥
यह प्रतिमां मेरी है भाई, सो हो पूर्जोंगो मन लाई।
यह गुर मेरो ताह्या मानों, ग्रीर मुनिनु को नाहि पिछानौ ॥४४३॥

प्र४७: १ करहु। २ प्राधित।

५४६ : १ A missing । २ उन ।

पूर्व १ काष्टा।

प्रमु : १ मई।

सोरठा :

ग्रैसें वात कितेक, किह किह मांथुर श्रावकित । पकराई ग्रति टेक, संघ निपछ परगट कियो ॥५५४॥

।। इती संघ उतपति 'संपूर्ण' ।।

सोरठा :

कुंदकुंद मुनिराज, श्रीमंदिर जिनके वचन।
सुनि हुव धर्म-जिहाज, श्रधिक समोधे मुनिनु कौं ॥१४४॥
चलते वहुत कुमार्ग, जो ए मुनि न समोधते।
तव ही तै सुभ मार्ग, गहि केते लागे चलन ॥४४६॥

## श्रथ कुंदकुंदाचार्य-वर्नन

दोहा :

संवत गुराचासा तरा, कुंदकुंद मुनिराय। भये भटारक श्रवनि पे, तिनकी है श्रमनाय ॥४५७॥ इनके काररा पाय के, नाम भये जिम पांच। सुने सु श्रव विधिवत कहे, भविजन मांनी सांच ॥५५८॥ पदमनंदि मुनिवर हुतौ, पैहले तौ निज नांम। मुनिस्वर के परसंग ते, लहे नांम श्रभिराम ॥५५६॥ देव मिल्यो यक श्रायके, करी वीनती येह। कहि ऐसी श्रवहं करूं, श्राग्या मीकौं देह ॥५६०॥ तव मुनिवर श्रैसे कही, विदिह षेत्र ले जाय। श्रीमंदिर स्वांमी तर्गों, दरसरा मोहि कराय ॥५६१॥ तव स्वरधारि विमांन मुनि, चालयो मद्धि श्रकास। राह मांहि पीछी गिरी, ठीक पड़चो नहि तास ॥५६२॥ मुनि वोले पींछी विनां, हम नहि मग चालंत। देव विचारी सो करूं, जिहि विधि चाले संत ॥५६३॥ गृधिपिछ्छ के परन की, पींछी दई वनाय। गृधपछाचारिज यहै, तव ते नांम कहाय ॥५६४॥

४४४-. १ 'सपूर्ण' not in A । २ सीमंघर ।

४४८: १ माने।

५५६: १ पहलें। २ फुनि सुर।

५६१: १ जब। २ सीमधर।

५६४: १ गृद्ध। २ परनि ।

स्वरमुनि गये विदेह मैं, दरसरा किय जिनराय। ऊंची सब ही की लघी, घनुष पांच से काय ॥४६४॥ चक्रवर्ति श्रायो तहां, दरस करण जगदीस। लिष वन मुनि की हाथ में, लऐ उठाय महीस ॥५६६॥ भाषी यह को जीव है, कमड़ल पीछी घार। जिन भाषी मुनि है यहै, भरथषड की सार ॥४६७॥ तव चक्रीयन कौ घरचौ, एलाचारिज नांम। फुनि श्राये निज षेत्र में, करि मनविद्यत कांम ॥५६८॥

सोरठा :

कवह विनां प्रभात, सामायक लागे करन। समये हुतों न भ्रात, ताते वांकी ग्रीव हुव ॥४६६॥ तव ते नांम कहात, वक्रग्रींव भ्राचार्य यह। फुनि सुनिएँ यह वात, कुदकुंद मुनि जिम भये ॥५७०॥

श्ररिल

कवह वाद करत हे श्रांन - मतीन ते, कमडल भरचौं लध्यौ जल वृष्ण वनवीन ते । वादी जलकों मंत्रनि ते मदिरा करी,

पूछी या कमडल मै मद तुम क्यों भरी ॥५७१॥ तव मुनिवर चक्रेस्वरि कौ सुमरन कियो,

देवि कृंद पूसपिन ते कमडल भरि दियो। तव तै लागे कहन मुनी कुदकुद है,

महिमां तिनकी जग मैं ग्रधिक ग्रमंद है ॥५७२॥ इनकी मत में श्रेस भई,

सूनी वात कहियतु है मित जांनहु नई।

काह समये संघ चल्यौ गिरनारि कौं,

क्तुदकुंदमुनि बहुरि स्वेतपट लारकी ॥५७३॥ साथि दुहूं मत के ही पच भये घनं,

पहचे गिर तरि जाय सर्वे ग्रैसें भने।

प्रदृह: १ A वोकी।

प्र७१ . १ झन्य । २ उहम ।

पूछ्र १ चक्रेश्वरी।

पहले दरसन करन तनों भगरो परचौ,

ग्रापस मांभि दुहुंन ही कै ग्राति रिस भरची ॥५७४॥
वैतौ कहै हमारो ही मत ग्रादि है,

दूजे कहै ग्रानादी हम वं वादि हैं।

तव श्रकास ते भई देववांनी यही,

भगरत काहे श्रादि दिगंबर है सही ॥५७६॥
पिहलें वंदन करी नेम जिनचंद की,

जवते श्रांमनाय ठैहरी मुनि कुंद की।

तवते रचे कितेक ग्रंथ भिव तारने,

विसंघीन कौ मत षंडन कै कारने ॥५७६
दोहा : इनहीं की श्रमनाय मैं, भये ग्रौर मुनिराय।

नांमी तिनकी ग्रलय-सी, कीरित कही वनाय ॥५७७

घरा ध्रमचद वड़ौ विड़दाल। छंद मोतीदांम : थप्पौ पट वारह-से-श्रठताल ॥ तिके रराथंभ प्रतिष्टृहि काजि। बुलाय लये मुनि घर्म-जिहाज ॥५७८॥ हुते गुर दक्षिण देस विसाल। पुन्या घरमें सुष सी गुनवाल॥ दयो तिनु कागद श्रावन काज। सिताव पघारह हे मृनिराज ॥५७६॥ महरत वांचि दियो यह जाव। गिरां मित ढील चले'व सिताव॥ हुवो रवि ग्रस्त भई जव राति। गये रराथभ मुनी परभाति ॥५८०॥ मिले तँह राव हमीर निरिंद<sup>9</sup>। मही घनि घनि हुवो सु मुनिद॥

५७५ १ वह।

५७६ : १ पहलें।

४७८ १ A झमचद ।

प्रव्रः १ नरिंद ।

भये वहु पर्म जे जेति रार्वे। भयो सु भलो जस पुन्य प्रभाव॥४८१॥

पुनः श्रन्योक्त भृदक्द स्रमनाय मैं, भट्टारक जिएाचद। दोहाः कछुपक तिनह कौ सुजस, सुनिऐ भवि गुरा वृंद ॥४८२॥

चोंपई . यनपं सर्व महाजन भ्राय, गढ चीतोड सु गये लिवाय।
जहा धर्म धर फुनि बुधिवंत, सांगो राणों राज करत ॥४६३॥
तहा चोंधरी हो जिए।दास, सागो तेजो है सुत जास।
साह गोत फुनि चौह धनवान, तिन को राषत हे सब मांन ॥४६४॥
सागे इक दिन विनती करो, करहुँ प्रतिष्टा मुनि गुन-भरी।
मुनि श्राग्या माफिक धन लाय, सब सामिग्री दई मगाय॥४६४॥
तब भ्रति हरष मांनि मुनिराज, करने लगे प्रतिष्टा काज।
दिवस कितेक करत जब भये, मुनि तौ तन तिज स्वर्गनि गये॥४६६॥
तिनके सिष्य पाट के जोग्य, हुतो न कोई महा मनोग्य।
भ्रायो हुतो प्रतिष्ठा जानि, इक सुरजन पांड्यो गुनषांनि॥४८७॥
ताके सिग तिथा हू हुती, गुन लांवन्य किरी होह मुनिराय॥४८६॥

दोहा: ईंह स्वरजन श्रावक तने, हुती देवि की इष्ट । ताते याकों मांनते; पडितजन हु सिष्ट ॥ሂ<६॥

चौपई: सव मिलि ताहि भटारक करचौ, प्रभाचंद्र नाम यह घरचौ। ग्रघ-तम-हरनं उयो मनु सूर, वढ्यौ प्रताप सवै भरपूर॥४६०॥ तिया हुती तिह ग्रजिकाकरी, 'करी प्रतिष्ठा तिनु गुन भरी<sup>९</sup>'। प्रभाचद्र मुनि कहीं प्रकार, काहू दिसि कौं कियो विहार॥४६१॥

छ'द पद्धरी: दिल्ली के पति पेरोजसाहि, चांदा गूजर परघांन ताहि।

प्रदर १ ग्रन्योक्ति।

प्रम् १ इनपे। २ चीतौड।

प्रदर्भ १ बहु।

प्रम् १ सामग्री।

५८७ १ सुरजन पांडे।

प्रद १ में लावनि।

पूर्व १ 'सोमित धर्म ध्यान गुन भरी।'

भइया पापड़ीवाल, दोऊ तिनकै चित इक उपजी रसाल ॥५६२॥ कीजे इक<sup>9</sup> सुभ कारिज जु कोय, दे स्रादि प्रतिष्टा सुजस होय। यृह करि विचार<sup>२</sup> इक नर वुलाय, मुहुरत³ इक सुद्ध भलौ कढाय ॥५६३॥ भट्टारक श्रीमत प्रभाचंद्र, पठयो वसीठ तिन पं ग्रमंद। मूनि पासि जाय विनती करीस, चिल करहु प्रतिष्ठा हे मुनीस ॥५६४॥ दिनकौ वताय दीन्हों प्रमांग, सवही सुनि लीनी मुनि सुजांरा। दिन वीते वह फुनि रहचौ एक, मृनि ते नर विनति करी प्रतेक ॥५६५॥ मुनिराज श्रवं मुहि सीष देहु, दिन रहचौ ऐक नांही संदेहु। कव चलि पहुचै वह ठाम हांन, तातं दीजे मुहि सीष दांन ॥५६६॥ मुनि कही म्रहो तर रहहु सोय, देषहु परभाति सु कहां होय। सोवत नर जव वह वढचौ प्रात, लिष दिल्ली ग्रचिरज भयो गात ॥५६७॥ मुनि कही जाहु दिल्ली मकार, साम्हे प्रवांन ल्यावे ग्रवार। नर प्रायहुं हूं भायन निकट्ट, कही भयो ग्रचिरज प्रगट्ट ॥५६८॥ गज हय रथ<sup>9</sup> पुनि<sup>२</sup> सुषपाल साजि, श्राये सांम्हे लैन काजि। सव

५६३: १यका २ उपाया ३ महुरता ५६६ १ फुनि। २ रथा

वाजे वजाय नौवति निसांन, विधि भली मिले मुनि सौं सुजांन ॥५६६॥ मृनि नगन पयादे चलन लाग, सव करी श्ररज मिलि हे सभाग। चढि लेहु पालिकी मुनि महांन, यामैं हमरो म्रति वढे मांन ॥६००॥ कहि मुनि हठते चढि ग्रहो साह, या विधि कौ तुम कीज्यो निवाहु। चढि चले पालिकी° साथि सर्व. जैनी फुनि<sup>२</sup> पुरजन त्यागि गर्व ॥६०१॥ श्रावत पूर मैं मनिघरि विषाद, राघो चेतन ग्रति किय ववाद। पालिकी वंद करि दी लवार, दीन्ही चलाय मुनि विन कहार ॥६०२॥ इन श्रादि वाद कीन्हे श्रनेक, मूनि जीति सर्व राषी सु टेक। इक दिनि राघो चेतन सु चाहि, नर पठ्यो वूमन मुनिनु पाहि ॥६०३॥ मावस दिनि मुनि तिह ठान देषि, सिष्यनु तं बूभी तिथि विसेषि। सिष्यन् मिलि पूरस्रया कहीस, यह ग्ररज दिलीपति पे दईस ॥६०४॥ है श्राज़ ग्रमावस श्रहो साहि, पून्यों भूठी कही काहि। वृतु पतिसाहि षिनाई<sup>†</sup> वूभि तिथ्यि<sup>9</sup>, मुनि भाषी पून्यों आजि सत्ति ॥६०४॥

६०० १ में चढ़ि वेहु।

६०१: १ पालकी। २ फिरि।

६०५ १ तित्य ।

<sup>†</sup>A popular Jharasahi word—To call for—e.g "वीदर्गी ने पीर खिनाई" ।

देवी पद्मावति भौं भ्रराधि, विनती करि संध्या समें साधि। दीन्हीं उगाय नभ मांभि चंद, प्रगटचौ पुर मै जस श्रति श्रमंद ॥६०६॥ वा दि। मिलि भाषी ग्रहो साहि, कोसनि परकास याहि। द्रादस सांड<sup>१†</sup> दौड़ाये<sup>२</sup> श्रनेक, तव सुनि मुनि दिय वांधि सु जाल ऐक ॥६०७॥ वे दौड़े कोस वहाँत वारह ही मैं ऊग्यौ प्रभाति। या विधि लिष साहि मुनिदं पासि, भ्राये निम कीन्ही भ्ररज दासि ॥६०८॥ यह काररा ग्रव कहिये मुनीस, मुनि कही वाद जांनहू महोस। ताह समये वादीन् श्राय, मंत्रित तै कमडल मद भराय ॥६०६॥ दे कही भ्रहो पतिसाहि ऐहु, कमडल मद भरचौ विना संदेह। मुनि लिष वार्में किय पुष्प श्रांनि, दीन्ही उघाड़ि कमडल महांनि ॥६१०॥ श्रति प्रस्न भयो पेरोजसाहि, मुषते मुनि घनि-घनि कही चाहि। यह कथा सुनी सव राजलोक, कीन्हों निदांन सव ही सु थोक ॥६११॥ -दरसन विनि भोजन हम करे न, विवि भाषे वेगमनु वैन। या

६०६ : १ पवमावति ।

६०७ : १ सोडे ।

<sup>†</sup>Messenger on the Camel's back.

तव साहि चुलाये ते प्रधान,
भाषी ले ब्राहु मुनी महान ॥६१२॥
दरसन वेगम जब करे ब्राप,
तव ही चुनको मिटिहै ध्रताप।
मिलि भाषी मुनि ते सबिन साह,
तुम दरस वेगमिन के सु चाह ॥६१३॥
तातें हमरी विनती सु ऐहु,
करि के लँगोट दरसन सु देहु।
मुनि कही सुनौ तुम सकल साह,
चिलिजे यह जग मांभि राह ॥६१४॥
साहन मिलि सब सौगँव करीस,
जुत बख मानिहें हम मुनीस।
तव ते यह राह चली विसेस,
कछु वल वीरज प्राक्रम घटेस॥६१४॥

छुपै: दिल्ली के पितसाहि भये, पेरोजसाहि जव।
चादौसाह प्रधांन भटारक प्रभावंद्र तव॥
ग्राए दिल्ली मांभि वाद जीते विद्यावर ।
साहि रीभि के कही करें दरसन अंतहपुर॥
तिह समै लँगोट लिवाय फुनि बांदै विनती उच्चरी।
मांनि हैं जती जुत वस्र हम सब श्रावग सौगद करी॥६१६॥

श्रिर्त्तः याही गछमें भट्टारक जब वहु भये,

वरष कितेक वितीत गछ निकसे नये।

तिनमें चलन वचन को भेद न जानियों,

निकसन की विधि लषी लिषी सो मांनियों ॥६१७॥

संवत तेरह सै पिचिहतरचौ जानिये,

भये भटारक प्रभाचद्र गुनषांनि वै।

६१३ : १ मिटहैं। ६१६ : १ चांदोसाह। २ A बिझाबर।

तिनकी श्राचारिज इंक हो गुजरात में,

तहां सर्व पंचित मिलि ठांनी वात मै ॥६१८॥
कीजे ऐक प्रतिष्ठा तो सुभ काज ह्वं,

करन लगे विधिवत सव ताको साज वं।
भट्टारक वुलवाये सो पहुचे नहीं,

तवं सर्व पंचित मिलि यह ठांनी सही ॥६१९॥
सूरि मंत्र वाही श्राचारिज कों दियो,

पदमनंदि भट्टारक नांम सु यह कियो।
ताक पाटि सकलकीरित मुनिवर भये,

तिन समोधि गुजरात देस श्रपनें किये॥६२०॥

चौपई: ग्यांनभूषरा ताकौ सिषि ऐक, दूजौ ग्यांनकीर्त्त सु विवेक । दोऊ मिलि के श्राघों श्राघि, गछ मै लिये महाजन साथि ॥६२१॥ सव गुजरात वहुरि मालवे, फुनि मेवाड़ माहि तिनुनवे । दिगंवरी इनकी श्रमनाय, सो विधि श्रवलों घाली जाय ॥६२२॥

दोहा: पंद्रह सै इकहैतरे, निकस्यौ गछ ग्वालेर। सिप्यि मुनी जिरणचंद कौ, सिंघकीर्त्ति गुरमेर ॥६२३॥

### श्रथ मंडलाचार्य उतपति वर्नन

पंद्रहसे सु वहैतरे, गछ थाप्यौ नागोर।
रत्नकीत्ति यह नांम भिन, निज वलवुधि के जोर ॥६२४॥
भट्टारक न केहावई, मंडलाचार्य कहाय।
तिनकी वा दिसि मांहि वहु, फैलि गई प्रमनाय ॥६२४॥
फुनि सतरासे सत्तरे, थप्पौ पाट ग्रजमेर'।
मंडलाचारिज दूसरो, तार्मे नांही फेर ॥६२६॥
इनहीं गछ मै नीकस्यौ, नूतन तेरह पंथ।
सोलह-से-तीयासिये, सो सव जग जानंत॥६२७॥

६२०: १ यहै।

६२१: १ सिष्य।

६२६: १ मजमेरि।

ऐती विधि इनहू तजी, गुर निमवो जग सार। केसरि जिन-पद चरचिवो, पुष्प चढावन चारु ॥६२८॥ भोजन तनक चढात नहि, सबरो<sup>†</sup> कहि त्यागंत। दीयग की ठौहर सबै, रंगि के गिरी घरंत ॥६२६॥ न्हावन करत न विव की, इन है श्रादि कितेक। भली तजी षोटी गही, तेको कहै प्रतेक ॥६३०॥ तिनके गुर नाहीं कहूं, जती न पडित कोय। वही प्रतिष्टा ग्रादि की, प्रतिमा पूजत लोय ॥६३१॥ वैही प्रतिमां ग्रथ वै, तिन मैं वचन फिराय। ठानि श्रौर की श्रौर ही, दीनों पंथ चलाय ॥६३२॥ फिरि<sup>9</sup> यक निकस्यो पंथ भ्रव, है सिरौंज की वोर । ताररा पंडित ने कियो, ग्राप श्रकलि के जोर ॥६३३॥ देस मालवा मद्धि तिन<sup>9</sup>, नयो देहुरो ठानि। प्रतिमा पधरावत नहो, पुस्तग पूजत जांनि ॥६३४॥ श्रेसे निकसे मत वहुत मन-मद घरि विपरीति। यह पचम कलि काल की, फैलि गई जग रीति ॥६३४॥ परि जे श्रव संसार मैं, जपत मत्र नौंकार। तिनतं वहसि न ठांनि हैं, रे भिव सो मतसार ॥६३६॥

## श्रय परिपाटी भट्टारकांनि की वर्नन

दोहा : श्रव परिपाटी हू कछुक, सुनि जु भये जगचद। महावीर प्रभु श्रादि मुनि, भट्टारक गुए।वृंद ॥६३७॥

चौपई : श्री प्रभु वर्धमान जिनराय, ते तौ मुक्ति पहुचे जाय।
तिनकै पीछे केवल-ग्यांन, वासिठ वरष रह्यो परमांन ॥६३८॥
तामैं गोतम गराधर भये, वहुरि धरमाचारिज ठये।
तीजे जंवू विगिक-कुमार, ऐ तदभव पहुचे सिव द्वार ॥६३९॥

६३३ : १ फ़ुनि ।

६३४ : १ तिनु ।

<sup>₹</sup> gnizzim A : ef 3

<sup>&</sup>lt;sup>†</sup>सकार or saltish food as different from प्रवास ।

वर्ष १ ऐक-सौ ग्यारह भ्रग, चौदह पूरव जुत सु भ्रभंग। तिनमै विष्णु मुनी नदि मित्र, ग्रयराजित मुनि भये पवित्र ॥६४०॥ गोवरघन श्रर भद्र सुवाहु, ऐही पांच भये मुनिनाहु। वर्ष ऐक-सौ श्रसी जानि, ताकै ऊपरि तीन वर्षानि ॥६४१॥ ग्यारह ग्रग दस पूरवधारी, भये मुनी ग्यारह ग्रविकारी। प्रथम विसाषाचारिज जानौं, वहुरि पोष्टिलाचारिज मांनौ ॥६४२॥ भये षित्रियाचारिज मुनी, ज्य फुनि नागसेनि मुनि गुनी। सिद्धारथ झितषेनि मुनिद, विजय वुद्धि मांन गुनवृंद ॥६४३॥ गंगधर्म-सेनि मूनिराय, ऐ सव ग्यारह भये सुभाय। वर्ष दोयसै ऊपरि वीस, ग्यारह श्रंग घरें मुनि ईस ॥६४४॥ नक्षित्राचारिज जयपाल, पांडु वहुरि घ्रुवसेन विसाल। कंसाचारिज हैं गुनषांनि, ए पांची ही जग सुषदानि ॥६४५॥ वर्ष एक सौ वहुरि भ्रठारा, एक भ्रंग इनहूं नै घारा। सुभद्र यसोभद्र मुनिराज, भद्रवाहु जग के सिरताज ॥६४६॥ लोहाचारिज लौ श्रंग जानें, छसै-तियासी वर्ष वषानें। वहूरि अंग जव विछिति जांनी, तव उपजे मुनिवर श्रुत-ग्यानी ॥६४७॥

# श्रथ पट्टावली वर्नन

दोहा : दिग्गवर पट्टावली, ग्रव सव सुनि हित ठांनि । भद्रवाहु यक अंगघर, तिनंही ते लैं जांनि ॥६४८॥

चौपई श्री गुरु भद्रवाहु मुनि भयो, संवत च्यारि तर्ग पट लयो।
तिनकै पट्टि भये गुनषांनि, संवत छव्वीसा कै ग्रांनि ॥६४६॥
गुप्तगुप्त ग्राचारिज एक, नांम तीन तिन लहे प्रतेक।
दुतिय नांम ग्रहंदविल लह्यौ, त्रितय विसाषाचारिज कह्यौ ॥६५०॥
तिनकै पटि भटारक भये, जहां-जहां जे-जे निरमये।
माघनदि छव्वीसै साल, भये बहुरि जिरण्चंद विसाल॥६५१॥

६४० . १ बरव ।

६४१ . १ शस्सी।

६५१: १ पाटि । २ छन्नीसै ।

किवत्त : गुराचासै भये कुंदकुंद पुनि उमा-स्वामि,
लोहाचार्य जसकीत्ति यसोनंदि जये हैं।
देवनिद पूज्यपाद गुरानिद वजूनिद,
है कुमारनिद लोकचंद जग छपे हैं॥
प्रभाचंद्र नैभिचंद्र भांनुनंदि हरिनिद,
वसुनिद वीरनिद तिन्हें हम नये हैं।
रतनकीरित मांरानंदि मेघचद्र फुनि,
सातिकीर्ति मेरकीर्ति ए छवीस भये हैं॥६५२॥

दोहा : भॅदिलापुर दक्षिएा दिसा, पट्ट भये छ्रव्वीस । वहुरि सुनहु जे जे भये, जिहठां मुनि-गन ईस ॥६४३॥ छसै-तियासी साल तै, पट वैठे मुनिराज । भट्टारक-पद पाय करि, भये सुघर्म जिहाज ॥६४४॥

किवत महीकीर्ति विष्णुनंदि भूषण भ्रौ सिरीचद,

निदकीर्ति फुनि देस भूषण से मानिए।

श्रनतकीरित धर्मनिद वीरचद भये,

रामचद्र रांमकीर्ति श्रभैचद जानिए॥

नरचंद्र नागचद्र चहुरि नयणनिद,

हरिचद्र महीचद्र माघचद्र दानिए।

ए श्रठारा पट भये नगरी उजेनि मांहि,

नमत वषतरांम तिन्हें उर ग्रांनिए॥६४५॥

चीपई संवत इक सहश्र तेईस, लक्ष्मी सिस गुग्गनिद मुनीस।
गुग्गचद लोकचद मुनि॰ वऐ, ऐ पट च्यारि चंदेरी भये॥६५६॥
सवत ऐक हजार गुण्यासी, के श्रुतकीरित हैं गुग्गरासी।
भावचद्र महिचद्र वषानी, ऐ- पट तीन भेलसै जानी॥६५७॥

६५२ १ यसोनव। २ मेरकीर्ति।

६५३ ' १ सुनौ ।

६४५ १ पाट ।

६५६ १ मुनु ।

दोहा . ग्यारह से चालीस के, साल भये श्रभिराम।
कुडलपुर में ऐक पट, माघचद्र तसु नांम ॥६५८॥
ग्यारह से चालीस परि, च्यारि साल ले जांनि।
तव ते भये मुनीस जे, तिनकों सुनि दे कांनि॥६५८॥

कावतः वृष्ठभनंदि सिवनंदि विश्वचंद्र सिहनंदि,

भावनंदि देवनंदि महा मुनिराज है।
विद्याचंद्र सूरचंद्र माघनदि ग्यानकीर्त्ति
गंगकीर्त्ति सिघकीर्त्ति धर्म [के] जिहाज हैं॥
हाडोती के देस माहि वार नगरो है तामे,

वारापट भये ये सकल सिरताज है।
कर जोरि तिनकौं नमत है वष्तरांम,
गुरिन कौ मेरी भव-भव तनी लाज है॥६६०॥
ग्यारहसै नव-निवं तएं सालि हेमकीर्त्ति,
सुन्दरकीरित नेसिचंद्र प्रभिरांम है।
नाभिकीर्त्ति वहुरि नरिद्रकीर्त्ति सिरोचंद,
पद्मनंदि वर्द्धमांन भले गुन धांम हैं॥
ग्रकलकचद्र ग्री लिलतकीर्त्त तीनों नांम हैं।
दुरग चीतोड माहि पट भए चौदह ऐ,

छंद : वारह सै-छ्यासठे साल पट प्रष्याति कीरति पागो। सांतिकीर्ति फुनि धर्मचंद्र मुनि रत्नकीर्ति जस छायो॥ प्रभाचद्र लौं भये पांच पट ए श्रजमेरि वताये। पद्मनदि सुभचंद दोय मुनि दिल्ली मैं पट पाये॥६६२॥

तिनकौं वषतरांम करत प्रनांम है ॥६६१॥

दोहा पट्ट एक ग्वालेर मैं, भऐ मुनी जिराचंद। पद्रह-सं-सतवोत्तरं, मनहु उये निसि चंद ॥६६३॥

६५८ १ सालि । ६५१ . १ चीतौड ।

पद्रह-से-इकहैतरे, प्रभाचंद्र यह नाप। वहूरि भये चीतोड भैं, सकल गुननि के घाम ॥६६४॥

पद्रह-से-इकग्रस्सी धर्म सू चद है, ऋरिल : लितकीत्ति फुनि चद्रकीत्ति सु ग्रमद है। भट्टारक देवेंद्रकीत्ति मुनि च्यारि ऐ, भऐ चाटसु में भविजन उर घारिए ॥६६५॥

सोरठा : नरेंद्रकीरति नांम, पट इक सागानेरि में। भये महागुन-घांम, सोलह सं इक्चाएकं ॥६६६॥

सत्रह-सै-चाईस तर्गं जो साल है, ऋरिल: सुरेंद्रकीरति भये सु तिन के पटि लहै 1। देवेद्रकीर्त्त गुनलीन है, जगतकीत्ति श्रवावति मैं भये भटारक तीन है ॥६६७॥

इक पट विल्ली फुनि हुवो, महेद्रकीरति नांम। दोहा: सत्रह-से परि-वारावे, लह्यो पाट गुनधांम(श्रभिराम १)॥६६८॥

चौपई पट्ट दोय पाये मुनिराय, नगर सवाइ जैपुर श्राय। इक खेमेद्रकीर्त्त गुनवाल, ग्रठारह-सै-पद्रह के साल ॥६६६॥ तिनकै पटि राजै बुधिवांन, सुरेद्रकीरति तम हर भान। साल भ्रठारह-सै-तेईस, भये भटारक महा मुनीस ॥६७०॥

भद्रवाहु मुनि श्रादि है, भट्टारक गुन षानि। दोहा : मुरेंद्रकीरति लीं भये, पट ग्रड्यारावें जानि ॥६७१॥ भ्रैसे यह पट्टावली, ग्रथनि के श्रनुसारि। कछु पोथिनु कौं देषि करि १, वरनन कियो विचारि ॥६७२॥

६६४ १ चीतौड ।

६६७ : १ पटि हा लहैं।

६६८ १ म्रिसराम missing ।

६६६ १ ठारह-सै-पद्रह। ६७१ १ दै।

६७२ . १ के।

गादि श्री महावीर की, वैठत ध्राये संत। तिनकौं वन<sup>े</sup> सम मांनिकै, पूजह सकल महत ॥६७३॥ इति पट्टावली पूंर्ण ॥ श्रय ध्रागम कथन वर्तन<sup>9</sup> ॥

श्रिरल . फुनि यह श्रागम कथ्यों सु भवि सुनियौं सवै,

सवत श्रहारहसै वीतेंगे जवे<sup>२</sup>। तापे वरष कितेक गये इम भास ही,

दक्षिरा दिसि मै वंध्याचल मैं गिर पास ही ॥६७४॥

दोहा :

पुस्कल नगर विषेसु ह्वं, वीरचंद मुनिनाथ।
गछ पिंकमर्ग अर क्रिया, न्यारी करिहै गाथ ॥६७४॥
भील संघ उतपित करें, नये ठांनि वहु वाक्य।
ग्याना वरनी कर्म की, लिह किर के परिपाक ॥६७६॥
वहु विधि किर जिन मत जु है, अव तिह तर्गों निपात।
किरिसी फुनि मुनि कोन ह्वं, जो मेटें मिण्यात ॥६७७॥
कहु जिन मग विधि और ही, चल्यों जाय इम धर्म।
ज्यों त्यों सुख दुष भुंजि की, किर किर के वहु कर्म ॥६७६॥
अत्व पंचम काल की, अंत जवें इक कोय।
मूल गुरानि कों घारि के, वीरांगज मुनि होय॥६७६॥
अलप पत्न्यों है सासतर, तौहू जैनि प्रकास।
करिहै वहुरि मिण्यात की, करिसी वहै विनास ॥६८०॥
भद्रवाहु को चिरत लिष, वरन्यों है या माहि।
भविजन लिष मोकों कछू, दोस दीजियो नांहि॥६८१॥

श्रथ श्रावक की उतपति वर्नन

दोहा :

. भ्रव उतपति श्रावकनु के, षांप गोत की जेम । भई सु पोथिनु देषि करि, वरनत है कवि तेम ॥६⊏२॥

६७३: १ उन।

६७४ : १ from इति to वर्नन not in A । २ सवे। ३ not in A !

६७६ १ ज्ञाना। २ परपाक।

६७७: १ तरा ।

६८२ : १ अय उतपति श्रावग की बर्नन ।

श्रागं तो श्रावक सबै, ऐकमेक ही होत। लगे चलन विपरीति तब, यरपे षांग रु गोत॥६८३॥ थपी वहैतरि षांग ऐ, गाम नगर कै नांम। जैसे पोथिनु में लषी, सो वरनी श्रभिराम॥६८४॥

### षांप वर्नन

गोला पूरव गोला राडा, कहैं लवेचू गोल सिघाड़ा। षडेलवाल महाजन सोहै, जैसवाल जग मैं श्रव जोहै ॥६८४॥ ववेरवाल सु श्रग्गरवाला, सहिलवाल जिन धर्म सम्हाला। सात षाप पुरवार कहाये, तिनके तुमको नांम सुनाव ॥६८६॥ भ्रठसध्या फुनि है चौसप्या, सहसरडा फुनि हे दोसच्या। सोरिंठया श्रर गांगड जांनीं, पद्मावत्या सप्तमा मांनी ॥६८७॥ फुनि दूसर श्ररु वरहासेएाी, पंथड़वाल गहोई लेएाी। इकईसवा जु जाणि सचागा, वहुरि म्रजोघ्यापुरी वपागा ॥६८८॥ वीडलसानी मसरा हेरा। गोरावाड वहुरि कठनेरा, धकडा गूनरवाली वाल, मारगडा सव मांहि विसाल ॥६८९॥ वेरवडा फुनि पल्लीवाल, गंगरिक ए वत्तीस सम्हाल। तीन षाप के हैं है नाम, तेहू तू सुनि लै प्रभिराम ॥६६०॥ सेहरिया निगमां गुजराती, मेवाडा रा-सूयचा-भाती । षरवा पंडावता हू वाजे, ऐ तीनों षटनांम विराजे ॥६६१॥ नागद्रहा ग्रर नरस्पयं घोड़ा, नयानश्रा फुनि है चीतोडा। है हरधरा और सीदरा, कुलया श्रावक ग्ररहू नरा॥६६२॥ दहवड़ राय कडावर्ण घोरा, चतुरय श्रावक है म्रति भोरा। पचम श्रावक है सुभकारी, ऐ भठतालीसौँ भ्रविकारी ॥६६३॥ चचल वल गोरा गुए।वान, करमराोत श्रीमाल सुजांन। फुनि ऐ श्रावक पांच कहावे, है चिडुकरा विवोरा भावे॥६९४॥ \_ मद वेवावली गुरा जांनों, कमटी ग्रागे श्रावक ग्रांनों । नुतया श्रावक सब मन भाये, तुला सिरी श्रीमाल कहाऐ॥६९५॥

६८७ १ पदमावत्या । ६९१ १ मेवाङा राया सूचा माती ।

इक कचगार दुतिय हय गार, त्रितय व्रांह्मण फुनि लौ गार ।

द्रावड़ नल या पन सिषवाल, काकलवाड़ जैन सगवाल ॥६६६॥

श्रवण पगाहुं मड़िषित्रिया, वोसवाल श्रर बुढ़िबेलिया ।

ऐ सब पांप वहैतिर भई, वारह श्रीर सुनौ यन मई ॥६६७॥

कंघड़ जनड़ा कोरड़वाल, षडहूता श्रक मेडतवाल ।

है श्रहिछत्र वहुरि दोहला, हरसूरा सुड़ीड़हा भला ॥६६८॥

गोतवंसी वल री गुल कहे, पौहकरवाल सु वारा भये।

पांप वहैतिर तो व कही, ऐ मिलि सव चौरासी भई ॥६६६॥

पोथी पांच सात को देष , किर विचार यह कीनों लेष ।

याम भूल्यो चूकचौ होय, ताहि सुधारि लेहु भिव लोय ॥७००॥

इनहीं में जो षंडेलवाल, तिनमें निकसे गोत रसाल।

चौरासी है तिनके नांम, सो विधिवत कहियत सुषधांम ॥७०१॥

#### श्रथ पंडेलवाल उतपति वर्नन

वीपई : श्री प्रभु महावीर जिनराय, तिनिह नमौं भिव मन वच काय।
पीछं भये कितेक मुनिद, तिनमें यसोभद्र गुर्णांचृद ॥७०२॥
एक अंग घारक यह मुनी, यनकहु वाते असे सुनी।
नगर पंडेला यक ग्रभिराम, भूपित तसु पडेल गिर नांम ॥७०३॥
वंस सोम फुल है चौहांन, सोभित तासु त्रेज जिम' भांन।
तहां मुनीस्वर गये कित्तेक, विप्रनु ते किय वाद ग्रनेक ॥७०४॥
जीते वाद रहे मुनि जहां, विप्रनु कोप कियो तव तहां।
पुरमें मलवाई को रोग, उपज्यों काहू पाप संजोग ॥७०४॥
छोजन लगे वहुत नर नारि, प्रोहित विप्रनु तवे विचारि।
जग्य सथापी जव नरमेद, तामे होमें मुनि पिड वेद ॥७०६॥
तयते विया ग्रधिक ऊपनी, मरन लगी पिरजा पुर तनी।
पुनि सव देस मांहि विन नीति, प्रगटची रोग महा विपरीत ॥७०७॥

६६७ : १ पुरेनिया।

६६८: १ मेरुनवास।

७००: १ देपि । २ सेपि ।

७०४ : १ जिमि ।

तवे उपद्रव लिष पुर मांहि, नर नारी सवही निकसाहि। नगरि नजीक गुढे करवाय, वसे तहां सव पुर के श्राय ॥७०८॥ असं होमे सुनि मुनिराय, यसोभद्र तव कियो उपाय। सिष्य जनसेनि हुतौ मुनि साहु, ताकौँ कही षडेलै जाहु ॥७०६॥ थापो श्री जिन-धर्म प्रवीन, जैसै चिल श्रायो प्राचीन । काहू भाति संक मति करो, प्रभु की नाम हिये मिष घरौ ॥७१०॥ तव जिनसेन वडेल ग्राय, श्रावक श्रेष्टी लये बुलाय। तिनको जुदौ वसायो गुढौ, सव कौं कही नांम जिन पढौ ॥७११॥ देव्य ग्रराधी चक्रेस्वरी, तार्कों मुनि यह ग्राग्या करी। सव जैनिनु की रक्षा करो, रोग व्याधि इनकौ सव हरो॥७१२॥ देवी मुनि की श्राग्या पाय, जैनिनु कौ दुष दयो मिटाय। तवं सुषी सव श्रावक भये, समाचार नृपह पं गये॥७१३॥ स्नि ग्रायो षंडेल-गिर मूप, वदे मुनि के चरन श्रनूप। विनती करी ग्रहो मुनिराज, तम हो नर भव जलिंघ जिहाज ॥७१४॥ कौंन पाप पिरजा छोजंत, सो मोकौं कहिए विरत्तत। छीजत भये वरष दस दोय, काहू भाति साति नहि होय ॥७१५॥ तव मुनि भाषी घ्रहो महीस, जिनमत घारी महा मुनीस। तप करते या नगर ढिगारि, विप्रतु होमे जग्य मभारि ॥७१६॥ घोर पाप उपच्यौ पुर मांहि, तातै सव नर नारि छिजांहि। यह विरतांत सुण्यो नृप सर्व, दुषी भयो मन मैं स्रति तर्वं । ॥७१७॥ विप्रनु ते मूपित ध्रनषांहि, क्रोघ करन लागे मन मांहि। तव मुनि कही ग्रहो नर ईस, सोच फिकर मित करहु नरीस ॥७१८॥ विप्र प्रोहितनु सांमिल होय, तुम ते तौ यह राषी गोय। कियो जग्य होमैं मुनि घनै, तातै तुम्हैं दोष नहि वनै ॥७१६॥ तव नृप कही ग्रहो रिषराय, दोष मिट सौ कहाँ उपाय। श्रौरिन ते यह मिटे न पाप, तुमही मेटौ जग सताय ॥७२०॥

७०६ १ सिवि । ७१० १ मध्य ।

७११: १ जिनसेनि ।

७१२ : १ A रक्ष्या।

७१७ : १ जब ।

श्राचारिज वोले नृप श्रहो, श्री जिनधर्म मर्म तुम गहो।

श्रोर सबै त्यागी मत जाल, ती वचाव ह्वं है ततकाल ॥७२१॥

भूपति हाथ जोरि सिर नाय, सबै कवूली मन वच काय।

तवते चौकी दें ईश्वरी, व्याधि सबै पुरजन की हरो॥७२२॥

पिरजा सुधी भई सब जांनि, भूपति हरष श्रधिक मन मानि।

वोले तुमहि धन्य मुनि नाथ, जग बूड़त राष्यी गिह हाथ॥७२३॥

श्रवजो श्राग्या ह्वं सो करं, तुम प्रसाद हम भव दिध तरं।

मुनि भाषी करिऐ नृप सार, श्रावग के वृत श्रगीकार॥७२४॥

जगत माहि हैं जन वहु रूप, तिनमै होहु महाजन भूप।

श्रौर ग्रांम हूं ते नर-नारि, श्राऐ तिन्हें बुलाय विचारि॥७२४॥

सवकी षांप सु षंडेलवाल, ठेहराई समेति भूपाल।

श्रैसै मुनि इष्ट के जोरि, सवकीं श्रावग किये वहोरि॥७२६॥

दोहा :

जे श्राऐ जिह गाम ते, ताही नांम सुगोत।
ठैहराऐ फुनि वंस कुल, पूरव किए उदोत॥ १२०॥
नाम वस के जो हुते, श्रागे ही प्राचीन।
सोम-हरी इष्वाक कुरु, फुनि सो रई प्रवीन॥ १२०॥
तामें सोम सु वंस मै, गोत तीन चालीस।
भये रहे कुल श्रादिके, देवी नई थपीस॥ १२०॥
प्रथमहि भाई सूप जुत, चौदह जांनि सुबुद्ध।
ते जिनसेनि समोधि के, कीन्हे श्रावग सुद्ध॥ १३०॥
वस सोम चौहान कुल, गोत गांम के नांम।
जहां जहा जो वसत हो, सो दीन्हों श्रिभराम॥ १३१॥
कुलदेवो चक्रेस्वरी, तिनकी दई सथापि।
सो पूरं मन कामना, विघन न होय कदापि॥ १३२॥

छुद छुप्पै<sup>9</sup>ः गोतसाह किय सूप षडेचा के जो नायक। गांव भावसा तर्गे भावसा गोत सु लायक॥ जल वार्गी सूलरगां पापड़ीवाल वताये। दरडीघ्या श्ररडक्चा गांम के नाम कहाऐ॥

७३३ : १ A छप्पे only ।

पीतल्या पहाडचा सामरचा नरवित हेला पांडिया। इम राजभद्र ग्ररु छावडा चौदह गोत सुमाडिया॥७३३॥

सीरठा : तिनमैं वारह मांहि, वंसदेच्य कुल ऐक ही। भेद भाव कछु नाहि, कहि भ्रायो सो जानियौं ॥७३४॥

श्रीरल : गोत दोय की बात भई श्रेसें नई, देव्य सावडा तर्ग बहुरि श्रौरिल भई। कुल देवी संभराय साभरचा पूजही। वरष कितेक वदी ते इम पूर्ज सही॥७३५॥

दोहा : या विधि तीयालीस मैं, चौदह कुल चौहांन।

भये सु भाई भूप जुत, फुनि यह सुनी सुजान ॥७३६॥
थापे हैं जिनसेनि तौ, चौंदह ही कुल गोत।
वहुरि श्रौर मुनिवर नु मिलि, थापे गोत सुपोत ॥७ ७॥
षट कुल पांमेचा किये, देवी श्रौरिल मांनि।
रारा रावत राउंका, मोघचा मौंठचा जांनि॥७३८॥
गोत विलाला दोय विधि, इक कहि श्रायो सोय।
दूले सोनिल कौंन मैं, कुल नदिचा होय॥७३६॥

संगरठा कुल जादव मैं पांच, गोत नीकसे हैं लिलत।
तामैं मानहुं सांच, डैंड्चल पूजें वैद तौ ॥७४०॥
वनमाला फुनि वव, भडसाली ग्रह नरपत्या।
करत न तनक विलव, पूजत देवी रोहगी।॥७४१॥

श्रिल : कुल मोहिल मैं गोत च्यारि ही जानिकैं। टोंग्या पूजत देवी चावंड ग्रानिकें। वहुरि वाकलीवाल कासिलीवाल हैं, हलद्या पूर्ज देवी जीगि विसाल हैं॥७४२॥

होहा : कुल गैहलौत पुगोत त्रय, पूजत गरापित चौथि। है विनायक्या विवला, वहुरि पोटल्या कोथि॥७४३॥

७४२ १ जांनके ।

७४३ १ गहलोत ।

श्रिश्तः पंच जु कुल पिंडहार गोत देवी सुनै,

वेत्र मालिया दोसी चांवड कों मने।

पीगोल्या कडवा गिर नांदिल मांनिएँ,

वड़साली पांडचा सरसिल के जानिएँ ॥७४४॥
कुलहु जील तूवर फुनि सोढा सांषला,

इन च्यारचौं कुल मांहि गोत कहिऐ भला।

वगड़ा श्रर पाटगी गिनोड़चा सांषुर[ए]या,

याही क्रम ते देव्य नांम लिषिऐ भएया ॥७४५॥

सरसिल श्रांमिंग सकरिंग श्रक सभराय के,

पूजन जात सु च्याह्यों गोत सुभाय के।

पूजन जात सु च्याह्यों गोत सुभाय के । राजहंस ग्रहंकारचा गोत सु दोय है, सरसलि सरस्वतिन मैं सुकुल नहि होय है ॥७४६॥

दोहा: कुल इन दोन्यों गोत कै, लिष्यो न देश्यो कोय। तातै वरनन नहि कयौ, दोस ना दीज्यौ लोय॥७४७॥ सोमवंस के वरनिऐं, गोत तीन चालीस। ग्रव कुरुवंसो जे भये, तिनकी सुनहु कहीस॥७४८॥

चौपई : कुर-वंस में श्रठारा गोत, तिनके कुल फुनि देवी होत ।

नांम गांम के गोत प्रमांन, सो सुनि लीजे सकल सुजान ॥७४६॥

कुल नादेचा गोत सु तीन, देवी सोनिल पूजिह दीन ।

छाहड़ कोकराज जुग-राज, ऐ तीनों तिनमे श्रित लाज ॥७५०॥

कुल मोहिल ह्वं गोत विसाल, सिरी मूलराज लिटवाल ।

इक कुन के जानों गैहलोत , तिनको वीरषिडिया गोत ॥७५१॥

ऐ तीनों श्री देव्य पुजाहि, फुनि कुलदेवड़ानि ह्वं माहि ।

कुल भाएयांक निगोत्या जेह, देवी हेमां पूजत तेह ॥७५२॥

दोहा फुनि को कारण पाय के, गोत निगोत्या जांनि ।

दाहा फुान का काररण पाय के, गीत निर्मात्या जीने । कुलदेवी चांवंड की, तिनकै है ग्रति मानि ॥७५३॥

चौंपई : फुल चंदेल गोत हैं सार, मूलसरचा फुनि चांदूवार । देवी मातिण पूजत गुरगी, तामै भेद कहूं सो सुरगी ॥७५४॥

७५१: १ गहलोत।

चांडूवाड़ भेद हैं मेल, इक कुरुंवसी कुल चदेल। इक सोमवस कुल चावडा, दोऊ मातिए पूर्ज षडा ॥७४५॥ तीन गोत कुल गौड उजेरा, गोधा सरवाडचा श्रजमेरा। देवी नादिए। पूज कराही, फुनि गोधा जिन साति पुजांहीं॥७४६॥

दोहा: देवी तिज जिन साित कौ, पूजन लागे जेम।
वीतें वरष कितेक सी, भिव सुिए कारए तेम ॥७४७॥
नादिए की सूरित हुित, रूपा तर्गी मनोग्य।
तािह भाजि सुवरए तर्गी, किर पूजी-स्रित जोग्य ॥७४८॥
जव नादिए किर क्रोध कछु, कीन्हों तिनकों दोस।
तवते पूजे साित जिन, हरघो देवी कौ रोस ॥७४६॥
वारहसै श्रठताल कै, सािल भई यह रीित।
तवते गोधा साित जिन, पूजत हैं किर प्रीति॥७६०॥

भौपई . तीन जांनियों कुल गैहलोत, पूजें पद्मावित ऐ गोत।
पाटोघी घोंघरी सु सार, सेठी जानि दोय परकार ॥७६१॥
इकतौ किह श्रायो सु सहीजे, दुितय वस इध्वाक कहीजे।
सेठी गोत लोह-सिल देवी, पूजत है इह भाति सुगोवी॥७६२॥
इक कुल कोटेचा सुगि-वागि, कांन्हड देवी गोत सीगागी ।
इक कुल ठीमर देवी लाहिंगि, कालागोत न हाके वाहिंगि॥७६३॥
कुरवसी ऐ गोत श्रठारा, श्रव इध्वाक वस मैं ग्यारा।
गोत भऐ कुल देख्य सुगीजे, भेदभाव तामें न करीजे॥७६४॥
है कुल मेरिठ लुह-सिल पूजें, गोत लुहाडचा लावट गूजें।
त्रय कुल कूरम गोत कटारचा, श्रौ गगवाल कांकरी भारचा॥७६४॥
ऐ कीनो पूजत जमवाय , इक कुल नादेचा सुभ पाय।
गोत नौपडा कहै श्रन्य, पूजत मस्ता देख्य स्वरूप ॥७६६॥
कुल वड़गूजर गोत सु तीन, विरत्या श्रर वावसा कुलीन।
ए द्वै मानत देवी सिरी, नमें वौहरा सौ तिल सुरी॥७६७॥

७६१: १ प्रकार।

७६३ : १सोगागी।

७६६: १ जमवाइ।

दुतिय वौहरा कुल गैहलोत, ग्रौर सकल जांनौ वह पोत। कुल भाला सु गोत चरकनां, नांदिल पूजत है सुभ मनां ॥७६८॥ ए सव ग्यारह गोत सुभये, वंस इप्वाक मांहि वरनये। **श्रव सुनि कुल सो रई प्रसिद्ध, गोत नीसरे दस ता-मद्धि ॥७६**८॥ कुल सोलंबी म्रांमिशा देव्य, गोत म्राठ मै है म्रति सेव्य। सोनी लौंहग्या फुनि सोहनी, भूंछ पांपल्या गदहचा भनी ॥७७०॥ सृपत्या सहित भये हैं सात, वहूरि पावड़चा है है भांत । इक पांवड़चा नमें मोहनी, दुतिय नमें म्रांमिणि<sup>२</sup> कीं गुनी ॥७७१॥ कुल सुनार द्वे प्रांमिशि नमें, वज्रहथा फुनि वज-गोत मै। ए दस वंस सोरई कहे, हैं हरि-वंस माभि हू गहे ॥७७२॥ नरपौंत्या निरगंधा गोत, कुल है दहरचा श्रौर नहि होत। देवी नांदवि<sup>२</sup> नमरा करांहि, सुषी होत तव या जग मांहि ॥७७३॥ ऐ सव भये गोत चौरासी, देवी यनकी सकल प्रकासी। तव ते पूजन लगे दिहारी, सव श्रावगनि प्रतंग्या धारी ॥७७४॥ चौपई भें : लिषी सुग्गी जैसी प्रति भासी, लिष विधिवत मित कीज्यौ हांसी। इन श्रावग के श्रापस मांहि, सगपरा है फुनि पांति जिमांही ॥७७४॥ या विधि मुनि सवकौ हरची, रोग दोष दुष कष्ट। श्रावग ठेहराये<sup>९</sup> विमल, सर्वे महाजन सिष्ट ॥७७६॥ तव श्रावकिन करी श्ररज, श्रहो महा मुनिराय। क्रिया धर्म श्रावग तर्गों, मग हम देह वताय ॥७७७॥ वोले मुनि वूभी भले, सब सुनिए मन लाय। जिनमत के श्रनुसारि सव, देहीं तुम्हें सुनाय ॥७७८॥ प्रथम कहौं किरिया कछू, जो सिंघ श्रावे सार। तामै कमी न कीजियो , करिक परम विचार ॥७७६॥ दोय घड़ी के प्रात उठि, मन मै जिप नवकार।

वहुरि करौ किरिया सकल, जिह प्रकार म्राचार ॥७८०॥

दोहा

७७१ . १ माति । २ स्त्रामिए।

७७३: १ नरपोल्या। २ नांदलि।

७७५ : १ चौपई।

७७६: १ ठहराए। ७७६: १ कीजि मी।

७८० ' १ कहीं।

#### क्रिया वर्नन

निसि ऊंन्हों श्रयवा छण्यों, जलतं पात्र भराय। वहर भूमि के फिरन को, प्रासुक भुव में जाय ॥७८१॥ तामें श्रेसी जायगा, बरजी सुनिएं साहु। वहर भूमि कों भूलिहू, एती ठीर न जाहु॥७८२॥

चौपई: जहा जु कोई देषत जाएगों, फुनि ह्व प्रेतिन तएगों ठिकाएगों।
परवत मस्तिग ग्ररु जल माहि, लिष के कवह किरिये नांही ॥७६३॥
फुनि वंवई देवल परहरिये, हलको लीक माहि निह किरिए।
फूलिन के वृषिनु के नीचे, डाभ वगन की ठौहर वीचे ॥७६४॥
हरी मूिम फुनि मूिम चिता की, गाय ग्रादि पसु वैठक ताकी।
ग्रानि तएगों ह्व कहं ठिकांएगो, इन ठौहर मल मूत्र न ठाएगों ॥७५४॥
तलाव ते दस हाथ परे ही, करे मूत्र यह बात वते ही।
इक सत हाथ परे मल मोचे, नदी ते चौगुएगों न सोचे ॥७६६॥
जलत ग्रगनिस्वर सूरिज चदा, होय मुनिस्वर ग्यान ग्रमदा।
कवह इनकों देषत जाई, मल फुनि मूत्र न मोचो भाई ॥७६७॥
वांवें हाथि सऊच करीजे, जल को पात्र दाहिने लीजे।
जो लिग हाथिन घोवे नाहीं, तो लिग वस्त्रिन नाहि छुवाहीं ॥७५६॥

दोहा: ग्रथवा वाहरि फिरन के, वस्त्र जिते जो होय।
तिन्हें जुदे ही राषिए, छींदो करें न कोय।७८६॥
नंदी ग्रीर तलाव में, सीचौ लेहु न मित।
प्रथम निवास मलीन ह्वं, ग्रस छांसेयों जल हुत ॥७६०॥
छारो जलते घोइए, मांटी ले निज हाथ।
तामें ग्रैसी होय सी, मांटी तजी ग्रकाथ॥७६१॥

७८१: १ बहरि।

७५२: १ एति ।

७८३:१ ज। २ प्रेतन ।

७८४ : १ उगन ।

७८४: १ कहीं।

७८८: १ हस्ता।

सोरठा :

वृषि तले की होय, फुनि ह्वै नंदी कूप की।
ह्वै तलाव की कोय, ह्वै मल-मूत्र समीपि॰ की ॥७६२॥
सो मांटी मित लेहु, घोवन कौं निज हाय तुम।
हिंसा होत श्रछेहु॰, याते वरजी है तुम्हैं॥७६३॥
वांम हाथ वर तीन, प्रासुक मांटी ते धुपै।
फुनि मांटी जल लीन, दोऊ घोवै तीन वर ॥७६४॥

दोहा :

दांतिरा सुको कीजिये, जो सुको न मिलाय। तौ पांचा परवी विनां, श्रौर कीजिये चार ॥७६५॥ जो कदाचि दांतिरा तराौं, मिलै नही संजोग। तौ द्वादस करला करै, मूष सूध होय मनोग ॥७६६॥ श्रव सनांन के करगा की, विधि भाषत हों तोहि। जीवजंत लिष दूरि करि, फुनि श्रासुक भूव जोहि ॥७६७॥ प्रथम लगावो ने तेल कौं, फूनि जल गरम मंगाय। पहले पग कटि घोय फूनि, मस्तिग जल नषवाय ॥७६८॥ करे मूत्र घोवे करनि, मइथुन श्रंति सनान। फिरि मल मोचै तौ करें, श्रर्ध सनांन प्रमांन ॥७६**६॥** करि सनांन ते श्रंग सुचि, फिरि सामायक ठांनि। नांम प्रभू को लेह भवि, विरियांतने निदांनि ॥८००॥ वहरि प्रभू की कीजिऐ, पूजा श्रष्ट प्रकारि। घरि प्रतिमां ह्वं तौ घरां, के देहुरा मभारि ॥८०१॥ प्रभु के सनमुषि प्रथम हो, ठाढ़ो ह्वं कर जोरि । दरसन करि विनती करह, विधिवत सीस निहोरि ॥५०२॥

### 'विनती'

छप्पै: तुम दरसन ते देव सफल मो मनिष जनम-हुव। / तुम दरसन ते देव सकल ग्रघ कष्ट टरि-गयव॥

७६२ . १ समीप।

७६३: १ प्रछेवु।

७६८: १ लगावै। ७६६: १ श्रंत।

८०२: १ सनमुख। २ करि जोरि।

प्रवि : १ B missing ।

तुम दरसन ते देव दोष दुष दालिद टलिहैं।

तुम दरसन ते देव ग्रमित मनविद्धित फिलिहै॥

करुनानिधान तारनतरन ग्रव में तुम दरसन करिव।

वर तीन प्रथम जय निरसही कहि-कहि कर्मनकों हरिव॥

दोहा: नमसकार श्रष्टांग करि, दे प्रदक्षिरणां तीन। जिन गुन पढि दरसन करहू, ह्वं प्रभु पद तल्लीन ॥ ५०४॥

श्रीरल . प्रतिमा<sup>९</sup> ग्यारह श्रागुल लों ह्वं घात की, ताहि<sup>२</sup> पूजि डावं घरि यह सुभ वात की। होय जुदी जायगा तहां डव्वा रहै, घर में कवट्ट न राषिवि राजी गुर कहै॥ ८०५॥

दोहा: श्रव पूजा की विधि सुनहु<sup>9</sup>, भविजन श्रित मन लाय। जैसे भाषी है गुरनि, तैसें<sup>3</sup> कहीं वनाय॥८०६॥

नौपई : वेदी ' तै व लिष दिसि ईसान, मेर काठकी थापि सुजान।
तापिर जल विट घारिए चाहि, पांडुसिला की नकल सुताहि॥ ५०७॥
वेदी ते जिन प्रतिमा लेय, ता जलविट पिर ग्राय घरेय।
वहुरि दसौँ दिगपालिन जान ', जिनकौ विधिवत किर ग्राह्वान॥ ५०६॥
पूजि करो तिनकौ सनमान, जथा जोग्य गुर-वचन प्रमांन।
पुति ह्वं ग्रघं प्रभू मुष पासि, विधि भिषेक प्रभु करहु हुलासि॥ ५०६॥
कलस पंच भिर के सुनि सीष, क्रमते जल फुनि रस ले ईष।
घ्रत ग्रह दूध-दही सुभल्पाय, बहुरो सर्व वोषधी वनाय॥ ६१०॥
जुदे-जुदे सनांन करवाय, ग्रधक-ग्रधिक वाजित्र वजाय।
पुति ग्रगोछि प्रतिमा सुभ काय, थापि ठौँर निज श्री जिनराय॥ ६११॥

८०४ १ प्रदक्षरा ।

८०५: १ प्रतमां। २ ताही। ८०६: १ सुनों। २ सो कछ ।

प्त**७: १एक। २ बोर। ३ मेरा ४ काष्ट।** ५ तिनपरि।

८०८ ' १ जांनि ।

८०६: १ जिन।

८१० . १ वोषदी ।

प्रथम हि षेत्रपाल कों पूजी, तेल सिंदूर धूप लै दूजी।
वदुक दीप फल गुड लें सूरि, पिंढकें मंत्र पूजि भरपूरि ॥६१२॥
फुनि प्रभु को करिकें श्राह्मांन, पुस्पनितं पिंढ मंत्र सुजांन।
श्राह्मान के पुस्प जु होय, प्रभु के चरनित पिर मेल्हों लोग ॥६१३॥
मत्र श्रा स्वामिन सबौ, इत्यादिका त्रिपिद मत्र पढे।
उ ही श्रहें श्री पर्म ब्रह्म श्रतरो वुतरावृतर सबौ षट् श्राह्मानन।।
श्रव तिष्ट ठ ठ स्थापना श्रत्र मम सनेहतौ भव भव वषट् सित्नधापन।।

दोहा: मन वच तन करि सुद्ध सव, मुखतं मंत्र उचारि।
दर्ग्य चढावो ग्राठ भिव, प्रभु की ग्रोर निहारि ॥८१४॥
जल गगादि सुगंध करि, धार चरन प्रभु देहु।
सो [लुटि] के तीनों जगत, करत पिवत्र सु ऐहु ॥८१४॥१
ऊ ही ग्रहं श्री परम व ह्मणे ग्रनतानत ज्ञान सक्तये।।इद मत्र।।

दोहा : दर्ब्य दर्ब्य परि मंत्र यह, पढ़ौ भिव सु मन लाय।

ग्रौर पढत सो जोग्य निह, नूंतन घरे वनाय ॥६१६॥ १

गरभ जनम तप ग्यांन श्रुरु, पंचम पद निरवांन।

यह मुषते उज्ञारिक, दर्ब्य चढाय महांन ॥६१७॥
चंदन श्रुरु कपूर ले, केसरि मिद्ध घसाय।

चरचहु श्री प्रभु के चरन, भव ग्रताप मिटि जाय॥

ग्रीषत सुगंधित ऊजले, कुंद पुस्प सम ग्रांनि।

पांच पुज प्रभु श्रुग्र घरि, मनु पुनि पुंज समान ॥६१६॥
कुंद कंज मंदार श्रुरु, पहुप मालती जाय।

श्रमर गुंज तिन परि करत, सो जिन चरन चढाय॥६१६॥

द१२: १ A भूरो। २ A पूरो।

८१३: १ पहुष । २ missing ।

प्तर्थ १ गंगादिक जल ल्याय के, सउगिधत करि लेहु। श्रिष्टि पीठ जिन बिंव के, जल घारा को बेहु ॥५१६॥

न्ध् : १ Not at all In B

८१७: १ गर्भ। २ जन्म।

प्पर : १ समांनि । प्रश्रु : १ सदारु ।

<sup>†</sup>The entire mantra not given in B.

नांना विजन दिध धिरत, दूग्ध भात पकवांन।
प्रभु के मुख श्रागं धरों, कनक याल भिर ग्रानि ॥६२०॥
पच-दीप की श्रारती, जोय फेरि प्रभु पास।
जीति मोहवा जे भयो, पंचम ज्ञान प्रकास ॥६२१॥
श्रापुर सांम श्रवर ग्रवर, बावन चदन लेय।
फुनि करि घूप दसांग भिव भारती, प्रभु मुख श्रागं षेय ॥६२२॥
श्रीफलाम्र दाड़िम किपथ, नारिंग पुंग विजोर।
इन दे श्रादि चढाय प्रभु, पद ढिगि सरस किसोर ॥६२३॥
करहु श्रष्ट द्रव्य ऐकठे, ग्रक नंद्यावत ठांनि।
दोव साथिया सहित भिन, घरो श्रवं मुखदानि॥६२४॥
असे पूजा श्रष्ट विधि, करहु भाव करि सुद्ध।
बहुरचौं पिंढ जयमाल कौं, श्रवं चढाय सुबुद्ध ॥६२४॥
फुनि पिंढ सांति जु सुमन ते, पढो विसर्जन-मंत्र।
ता पीछँ दे श्रासिषा, विधन-हरन जग जंत्र॥६२६॥
श्राह्मान (नैव जानामि इत्यादि मत्र)²

स्रह्मांन के पुष्प की, देहु स्रासिषा लीय।
स्रीर ठौर के पुष्प तौ, विघन हरन निह होय ॥ ५२७॥
वहुरि सास्त्रिन श्रवण किर, कर गुरिन की भिक्त ।
दया भाव राषे सदा, दान देय विधि जुक्ति ॥ ५२६॥
स्रव क्रिया मिन श्राविका, तणी किस्तुक हित ठांनि ।
उठि प्रभाति नवकार मिन, जप दया उर स्रानि ॥ ५२६॥
वहर सूमि दांतिण तणी, किरिया जिसे प्रकारि ।
कहि स्रायो जो पुरिष कों, सोही कर विवारि ॥ ५३०॥

चौपई : पें निति तिरिया भ्रघं सनान, करें सुभाषी यहै प्रमान। प्रासुक भुव लिषके जिय जंत, मस्तिगि परि जल निह नाषत ॥६३१॥

८२० . १ दुगघ ।

दर्१ : १ A ग्यांन ।

त्र्रे १ स्यांम । २\देशांग ।

८२७ १ म्राहवान । २ not in B । ३ पुष्प ।

प्तरह. १ A किरिया। २ तनी।

न्द्रेश्ः १ करहु।

दोहा:

सूरज की परकास ह्वं, तवं वुहारी देहु। क तौ कूटी मूज की, के ग्रति कोमल लेहु ॥ ५३२॥ जीव जंत कौं वस्त्र तं, पहलं दीजे टालि। वहूरि वृहारी दीजिये, निज नेत्रनित निहालि ॥=३३॥ चूल्हा की वांनी सबै, काढै लिष के जीव। फुनि पांडू पीली तराी<sup>9</sup>, चौकौ देत सदीव ॥८३४॥ चौका यातं दीजिये, मृतक जीव जो कोय। लेय विलाई स्रादि जिय, वामग निकसे होय ॥ ५३ ४॥ नई मुमि जो होय तौ, जलते छिड़का देहु। जो चूनां की होय तौ, घोय सुद्ध करि लेहु ॥५३६॥ लकड़ी ग्रथवा ऊपले, सुके चूल्है वालि। वीघे ह्वं जालिन सहित, तिनकों दीजे वालि ॥ ५३७॥ निज वा उत्तिम<sup>9</sup> जाति तै, जल मंगाइऐ सुद्ध। नीच जाति कौं भूलिहं, छुवन न देहु सुबुद्ध ॥५३८॥ पांगी छांगों जुगति सौं, कपड़ा गाढो रयाय। हाथ प्रढाई दोवरा, इक नांतिएाँ। कराय ॥५३६॥ ले करवा त्तल ढांकर्गों, टपका परन न देय। करे जिवांण्यां <sup>3</sup> जुगति सौं, फ़ुनि वा जलकौं लेय<sup>२</sup> ॥८४०॥ होय जहां को जल जहां, भेजि देह भविराय। वामैं श्राछी जुगति सौं, दीजे ताहि मिलाय ॥ ८४१॥ चंदवा चूल्है परहडे, ऊपरि इक-इक राषि। जाले जिय षोटी वसत, पड़ै नही यह साषि ॥ ८४२॥ नाज मगावो देषि के, वोध्यौ घुण्यों न होय। ताह कों स्रिति सोधिक, षोटे पीसे जोय ॥ ५४३॥

पर्व :1१ A सूरिज।

प३४: १ ▲ तर्गों।

प्रदेश : १ A लेई।

**८३७ : १ वीज्ये ।** 

**५३**८: १ उत्तम । **५३६: १ कपरा। २ गार्डी।** 

प४० 🗓 १ तिल । 🛮 २ देहु । 🗯 ३ जिवाण्यों ।

चाकी ऊषल पोति कै, पीसे घोट नाज। नीच जाति के हाय ते, ऐ न करावै काज ॥८४४॥ वहुरि चालगा। छाजले, चमड़ा विन के होय। तिनते छांगाँ फटकिये, नाज सु दोष न कीय ॥८४५॥

सोरठा •

विन सोध्यौ ह्वं नाज, तरकारो धोयें विना। रसोईन भे साज, ए ग्रावा दीने नही ॥८४६॥ ऊन हाड़ चमडा ज, फुनि षोटी जो वस्त हुं। रसोईन मैं साज, कवह न म्रावा दीजिये ॥८४७॥ जे घर माहि होय, तौला हाडी फुनि चरी। तिन्हें उघाडी कोय, राषि न कवह रांधता ॥ ८४८॥ घिरत तेल जल कोय, चमड़े परस्यों हु जु ह्वे । ताहि न षावो कोय, वहूरि होंग कौ श्रादि दे ॥५४९॥ या विधि तिय सूचि ठांनि,पहरै उत्तम वस्त्र कौं। दया भाव उर श्रानि, करें रसोई जुक्ति सौं ॥८५०॥

दोहा :

वहूरि पुरिष जीमरा करें, रसोईन में पैठि। तौ सनान करि के करें, ऊजल घोवति वेठि ॥ ५ ४१॥ जो सनान परभाति कौ, करि फिरि फिरवा जाय। तौ कटि तक न्हाएँ विना, सुद्ध न ह्वं निज काय ॥८५२॥ प्रमू पूजि स्रावै घरा, जवे तयारी होय। सर्वे रसोई की सुचित, तव यम किरये लोय ॥८५३॥ करै ग्रहस्थी षट करम, जिन विन शरे न कीय। तिनको दोष जु प्रावसिक, जतन कियें हू होय ॥=५४॥ ताकौ दोष मिटै सु यम, सिघ सबकी कढवाय। चढवावै भगवत कौं, जिन-देवल मैं जाय ॥८५५॥

८४५ १ विनि । २ जो । ८४६ १ रसोईनि । ८५० १ ८ उत्तिम ।

८५१: १ रसोइन ।

प्रश्ने: १ ∧ फिरिवा। २ तकि।

८४३ : १ इम । **८५४ : १ विनि ।** 

फुनि द्वारा पेवरण करें, जो मुनि स्रावं कोय।
ताकों ले पडगाहि दें, सुद्ध स्रहार जु सोय ॥ ५६॥
पेऐ कवहु न दोजिये, मुनि कों भोजन दांन।
विन जल दिध झत स्रोर जो, वास्यों भोजन जांन॥ ५५७॥
वांदे वांदी पांहुने, मत्र जंत्र स्रह देव।
इनकें निमित कियो जु ह्वं, सो मुनि दें न तजेव ॥ ६५६॥
वीध्यों भूठों वररण-च्युत, रोग वधांवन वार।
सूको जीररण चिलत रस, रिति विरूद्ध दुषकार ॥ ६५६॥
स्रायों ह्वं परगांव सौं, चमड़े दुरजन कोय।
परस्यौ विल्ली तुरक कौ, निंदनीक जो होय॥ ६६०॥
फुनि परस्यौ ह्वं रजसुला, तिय घर की का स्रांन।
ए सब दूषरण टालिकें, दें मुनि भोजन दान॥ ६६१॥

# रजस्वला वर्नन

रजसुलानि तिय को वरन, कछु यक कहाँ सुभाय।
ग्रंथनि कौ मत पाय कें, सो सुनिएँ चित लाय ॥ ६२॥
होत रितवती जो त्रिया, जाके हैं है भेद।
ऐक प्रक्रत इक विक्रत है, विधि सुनि वहुरि निषेद ॥ ६६॥
ह्वं जोवन मद रोग तें, विक्रत सु होय श्रकाल।
सो सुध ऐक सनांन तें, त्रय दिन गर्ने न लाल ॥ ६६॥
होत मास के मास जो, ताहि प्रकृत ते तु जांनि।
निसि श्राधी वीतें जु ह्वं, तवतें त्रय दिन मांनि ॥ ६६॥।

छंद पद्धरी : इन तीनौं दिन के मांभि जोय, एकांत विषे तौ रहे सोय।

प्प्रद : १ पाहुने । २ A निमति ।

५५६: १ भूट्यो । २ जीरन ।

६६२: १ A रजगुला।

**५६३. १** तिया।

द६४ : १ गिने।

द६४: १ ^ विकता

चित राषे सुस्या जु घारि मौंन, परसै न काहि नहि करै गींन ॥=६६॥ चरचा न करें गुर देव धर्म, पसवोई सूघत नाहि पर्म। विन तीन जु नीकें सील पालि, भोजन इक चेर कर सम्हालि ॥ ६६७॥ गोरस न पाय काजल कर न, गघ लेप न माला उर' घर न। मुप निज गुर नृप कुल देव-देव, लपं भ्रारसी नहि लपेव ॥ ६६८॥ फुनि श्रपनी भी जो पीव होय, तिह साथि वोलिऐ हू न कोय। वृष' तलि फुनि सोवत पाट नाहि, जप मत्र हुदै हू नहि कराहि ॥=६६॥ जीमें विन कासी श्रीर पात्र, पातिल श्रंजुली मधि पुघ्या मात्र। तीनों दिन तौ करिक सनान, घर काज करें कोउ न ग्रांन ॥८७०॥ चौर्यं दिन घटिका छह प्रमांन, दिन चढे तवे फरिके सनांन। सव कों भोजन करेय, **ਜੀਟੇ** पचम दिन गुर फुनि देव सेव<sup>२</sup>॥५७१॥ निज मंदिर में करिये सनांन, नदी तलाव मित जाहु श्रान। वहुरघों श्रव सुनिये श्रौर वैन, नर नारि वहुरि ऐती करें न ॥५७२॥

८६६ : १ सुसद् ।

द्रदः १ उ। द्रहः १ वृष।

८७० : १ क्षुघा।

८७१: १ फरिसुय। २ सेय।

दोहा :

तिय रतिवती जु जांनि के, वतलावो मित कोय। ऐक वास ते सुध ह्वं, वतलायें ते लोय ॥८७३॥ सपरस कीतौ कांचली, वस्त्रनि तै इक<sup>9</sup> हाथ। रहिये दूरि सु तीन दिन, श्रवर सुनौं इक गाथ ॥५७४॥ वैठी सूती ह्वं जहां, फुनि भोजन जहां कीन। सो भुव लीप सुद्ध ह्वं, नाही रहै मलीन ॥८७४॥ वालक पीवै जो सतन, छांटे तै सुध होय। वड़े वाल परसे जु को, न्हायें सुचि ह्वं सोय ॥५७६॥ रितिवती भु जिह पात्र मै, भोजन कीन्हों चाहि। तामें भोजन 'जो करै, दोष लगै म्रति ताहि ॥८७७॥ वस्त-जुक्त न्हावे वहुरि, दोय करे उपवास<sup>9</sup>। तव ताकौ दूषन मिटैं, इम गुर करे प्रकास ॥५७५॥ पात्र बस्न रहवा तराी, ठौहर परसे कोय। न्हावै श्रपराजित जपै, सतव सू तव सूघ होय ॥ ५७६॥ सुकवि कहालौं वरनवै, रतिवति दोष निहारि। लोक-विरुघ जो श्रौरह, टरैं सु दीजे<sup>9</sup> टारि ॥८८०॥ श्रैसी रितिवति जांनियें, जो नारी घर मांहि। तौ मुनि भोजन देह मति, श्रति ही दोष लगांहि ॥८८१॥ वरनन ताके दोष की, करैं भक्ति ग्रस काँन। द्वारा पेषएा हं न करि, ता दिनि रह<sup>3</sup> गहि मौंन ॥८८२॥ जो घर में ह्वं सुद्धता, तौ मुनि कौं पडगाहि। विधिवत नवधा भक्ति करि, भोजन दीजे ताहि ॥८८३॥ जव श्रहार कों ले चुकं, तव वन भूनि कों जाय। निज श्रावक निज द्वारलौं, श्रावह भवि पहचाय<sup>२</sup> ॥८८४॥

<sup>508:</sup> १ A यक ।

८७५ . १ जहं। ८७६ : १ वडो।

८७७ : १ रतिवती । १ कीनौं।

८७८ : १ A व पवास । २ टरे ।

प्त७६ : १ A रेहवा।

८८०: १ दीज्ये। ८८२ . १ A missing। २ दिन । ३ रहि।

प्पर : १ त missing । र विवा । २ रहि । प्रदर्भ : १ उन । २ ^ पीहचाय ।

Front Desk Jainism Forum (FDJF)

जो मुनि हूं नाहीं मिलै, श्रावक हू नहि होय। तौ मूषे कौं दीजिऐ, दया भाव करि लोय॥५५४॥

#### दांन वर्नन

जिनमत मांहीं दान ऐ, गुरनि वताये च्यारि। सो सवही को देहु भवि, मनमें हरष विचारि ॥८८६॥ लिषके जांनि सुपात्र कीं, दीजे दान ग्रहार। श्रौरिन कों षुघ्या निमति, देहु दया उर घारि ॥८८७॥ वोषदि भोग्य वर्गाय करि, जथा-जोग्य तुम देहु। रोग मिटे रोगीनु कौ, तुम भव भव सुष लेहु ॥८८८॥ प्रय जिते जिनमत तर्गे, तिन्हें लिषाय स्वरूप। कमडल पोछी वस्तिका, दीजे गुरनि श्रनूप ॥८८९॥ जीव जत प्रांगी सकल, ताकौं मारत कीय। ताहि वचाय उपाय करि, ग्रभय दांन यह जोय ॥८६०॥ ऐही च्यारचौ दान हैं, महा जगत मैं सार। या भव वारापार ते, ले पौंहचावे पार ॥८६१॥ वहुरि श्रावकिन कों कहे, दक्षि करन ए च्यारि। पात्र सकल ग्ररु सम दया, तेहू देहु विचारि ॥८६२॥ पात्र मुनिश्वर फुनि कहे, श्रावक समकितवान। भोजन दे फुनि वस्तिका, कमड़ल पीछी दांन ॥ 5 ह ।। सकल दक्षि यह जानि तू, परिग्रह की करि त्याग। घांम कृटव धन श्रादिसौं, तजै सर्व श्रनुराग ॥८६४॥ सुत दे स्रादि बुलाय सव, सींपे घर की भार। म्राप निरापेषी रहै, पालै तप-त्रत सार ॥८६५॥ समदित याकों कहत हैं, साघ घर्मी ह्वं कोय। म्रथवा वहरा सु भागािजी, होत जवाई सोय ॥८६६॥ हय गय रथ घन घान्य घर, वस्त्र श्राभरण कोय। इन दै स्रादि जु दीजिए, जथा-जोग्य जिह होय ॥८६७॥

८८८ १ भौषि ।

वया दक्षि प्रांगी सकल, भूषे रोगी जांति।

वालक वूढा तरुग कौं, जथा-जोग्य दै दांत ॥८६८॥

ए च्यारचौं ही दक्षि हू, कहे जिनागम मांहि।

करि विचार ग्रुरु दीजिए, यामैं दूषन नाहि॥८६६॥

दित्त समें लिष दीजिए, दान सु निति प्रति देहु।

यथा-सिक्त तव श्राप निज, भोजन सुद्ध करिहु॥६००॥

जिनमत के श्रनुसार तं, कहें दांन ग्रुरु दित्त।

भाव सुद्ध करि दीजिऐ, सुभ फल पंहै सित्त ॥६०१॥

यथा-सिक्त दे दांन फुनि, निज जीमत ह्वं सुद्ध।

ऊजल घोवति वेठि करि, साध मौंन सुबुद्ध॥६०२॥

# मौंनि वर्नन

भोंहा रेषे पै नही, ग्रंगुरी तै न वतांहि।
नांहि हलै न षंषारिये, सोही मौंन कहांहि॥६०३॥
वहुरि जीमतां पालि भवि, श्रंतराय ये सात।
मांस मृतक मद रुधिर फुनि, हाड़ चाम छह वात॥६०४॥
ए तौ नांहीं देषिऐ, फुनि जाको ह्वं नेम।
थाली में श्रावं तऊ, मुष में देहु न केम॥६०४॥
जिनमत में तिजवो कहे, ऐ वाईस श्रभष्य।
तिनकौं लेहु विचारि भवि, षावो तजौ प्रतष्य ॥६०६॥

कवित कंद मूल वोला निसी भोजन तुषार विस,
मि.उ.: संधारों सु-घोल वडा कवहू न षाइऐ।
मधुमद मांषन चिलतरस मांटी मांस,
वहु-वीजा वेगरा श्रजांरा फल गाइऐ॥

प्रदेष ' १ A जोगि।

६०१:१ हो है।

६०२: १ मौंनि।

६०३: १ A राषे।

६०६ : १ A षतका।

६०७: १ स्रोघोल।

तुछ फल पीलू षर्गा ऊवरा कठूं वरा³, सु वडवाला पीपला ऐ तनक न ल्याइऐ³। श्रावग कों यनको सरव त्याग कह्यो, ऐही वाईस ग्रभष्य जिनमत मैं वताइऐ॥६०७॥

जो सिंघ ग्रावं तो भले, मौंनि ग्रोर ग्रतराय। दोहा: पे श्रो सकल हरीनु की, मरजादा करि षाय ॥६०८॥ घात-पात्र मैं जीमिवो, भाष्यी है उत्तकिष्ट। जो न मिले तौ जीमर्गों, पातिल हू मैं सिष्ट ॥६०६॥ ता पातिल के भेद ह्वै, सूकी दीजे विशासि। तामें जीव पर्ड घर्ने, जाला रहे जु लागि ॥६१०॥ व्यीपारी जो होय सो, कर भली व्यौपार। चाकर करि सुभ चाकरी, दर्व्य उपाची चार ॥६११॥ पैसा षरे पसेव कीं, लाय रसोई माहि। श्रीर तरह को होय सो, यामें खरची नाहि॥६१२॥ तजह श्रयाएं। तेल की, फुनि वजार की चून। छाछि पहर सोला पछं, षारा तराी करि मूंन ॥६१३॥ भुरडी कहैं जवारि की, छोला देहगी होय। **भ्रादि वाजरे के सिरा, होला करहु न कोय ॥६१४॥** दोय ढालि ह्वं नाज की, ता संगि दही न षाय। याते वरजी है गुरनि, गलै जीव पडि जाय ॥६१५॥ होय चलित-रस जो वसत, फल दं म्रादि म्रहार। बहुरि मिठाई हूं चलित, षावो तजौ प्रकार ॥६१६॥ तजी ऊट का दूघ की, षीर षाए। भविराय। यामै दोष लगे श्रधिक, हिंसादिक की श्राय ॥६१७॥

६०७ २ कठुवरा। ३ लाइए।

६०६: १ A लाज्यो ।

ह्१०: १ वीज्ये।

**६११: १ A चार ।** 

दोय पहर दिन जव चढ़े, मिद्ध घड़ी घटि दोय। तव तें सांमायक करै, च्यारि घड़ी ली लोय ॥६१८॥ १ वहुरि उताविल होय को, तौ लिष व्यौंत विचारि। नाम लेहु प्रभु को भले, घड़ी ऐक ह्वं च्यारि ॥६१६॥ विधि ही संघ्या तर्गों, सांमायक तू ठांनि। घड़ी दोय दिन वहुरि निसि, घड़ी दोय ले मांनि ॥६२०॥ निसि वीते यक पहर जव, तव गृहस्थ जो होय। निज तिय रिति सेवन करै, पहले करहु न कोय ॥६२१॥ तामें ते परवी दिवस, चौदिस श्राठं जांनि। त्यागै निज पर सच तिया, ते जग मैं गुनषानि ॥६२२॥ पर-तिय की तौ जांनि के, करें सर्वथा त्याग। परवी दिन फुनि दिवस कौं, निज तिय तिज वड-भाग ॥६२३॥ यह तौ विधि तुमकौं कही, फूनि सुनिएं अविराय। घर मै घन वह होय तौ, जिन-मंदिर चुनवाय ॥६२४॥ फ़ुनि पूजा के उपकररा, नऐ नऐ करवाय। भारी प्याला भ्रारती, कलस जलौटि वनाय ॥६२४॥ ठौंराां ग्रर घूपायराां, भांभि भालरी थार। चंदवा श्रादि वनाय करि, घरि देहुरा मकार ॥६२६॥

# तापरि साषि धर्मोमृत क्रतेन छप्पै

विरल मूंग उड़दादि घान्य दो दालि तरो जे।

काचे दि तक्र मैं मेलि निह षांरा भरो जे॥

प्रात गले के मिद्ध जीव वहु उपिज मरे हैं।

धम्मीमृत श्रावकाचार मै वरन करे है॥

मेवादि तरो दो दालि हैं तिनकी विदल नहीं घरगै।

भनि वषतराम श्रैसं सुगुर गृंथिन मै वरनन करगौ॥१॥

दोय दालि कौ घांन्य फुनि, दुग्घ मिलाय न षाहु। पत्र जाति जे हरित हैं, चत्रमांस तजि साहु॥२॥

१६ : १ A includes the following additional lines between (917-918) without disturbing the verse order

नए वनाम्रो विव प्रभु, फुनि प्रतिष्टा कराय। चव विधि संघ जिमाय भिव, तीर्थिन संग चलाय॥६२७॥ धन पाये कौ फल यहैं, दांन पुन्य जिन-धर्म। इनमै धन वहु षरिच हों, तो पैही सुष मर्म॥६२८॥

# श्रथ सूवा सूतिग वर्नन

दोहां : सूवा सूतिग हू तर्गी, कछु यक सुगियें वात ।

मरजादा माफिक करें, मिट तास उतपात ॥६२६॥

सूवा की यह विधि तिया, करें चतुर्थ सनांन ।

तव तें मांस जु तीसरें, जात जु गर्भाधांन ॥६३०॥

श्राध नाम ताकों कहैं, इक सनांन ह्वं सुद्ध ।

मास पचे में षट्ट में, जात सु सुनहु सुबुद्ध ॥६३१॥

नाम पात ताकों कहैं, सूवो दिन छह पांच ।

गिनिऐ न्हांऐ सुद्धे ह्वं, यहें मांनि तुव साच ॥६३२॥

होय सातवें श्राठवं, नवें सु कहि परसूति।

ताकों सूवो दस दिनां, फुनि न्हाएं सुध सूति॥६३३॥

### सुतिग वर्नन

दोहा : वालक मूवो होय तो, सूतिग गिशा दिन एक।

जो वालक पोढों षिरं, तो त्रय दिनां गिरोक ॥६३४॥
वड़ो पुरिष कोई पिरं, ते ताको सूतिग ऐहु।
दिन द्वादस स्रोरं क्रिया, लोक प्रसिद्ध करेहु॥६३४॥
यातं यह वरनन कियो, मुनि कों भोजन दान।
सूवा सूतिग माहि तुम, सूलि न देहु सुजान॥६३६॥
ऐ ती श्रावग के कहे, किरिया फुनि श्राचार।
तामें ते स्रावे जु सिंघ, सो सब साघहु सार॥६३७॥
स्रव सुनिऐ श्रावग-घरम, कछु यक कहों वनाय।
तातं स्रघ निस स्वगं लिह, फुनि सिवगित कों जाय॥६३६॥

<sup>1</sup> gnizzim 9: 353

ह्३१: १ पांच।

६३२ : १ श्रुव ।

Bultsim A 🏅 、 名美3

६६४ : १ पुरव ।

# श्रथ श्रावग-धर्म वर्नन

भ्रनहिंसा रु भ्रचौर्य फुनि, (भ्र)सित व हाचर्य पालि । दोहा: परिगृह करि परमारा ऐ२, श्रागुव्रत पंच सम्हालि ॥६३६॥ हिंसादिक कौं त्यागि हौ, सप्त विसन कै साथ। पिलहै जिनमत तोहि तव, जिन्है जिन-गुन-गाथ ॥६४०॥ सुनहु ग्रहिंसा को कथन, भविजन ग्रति मन लाय। जीव जंत प्रांगी सकल, तिनते रहु समभाय ॥६४१॥ जीव-वय<sup>9</sup> मति कीजियो, कवहू मन वच काय। दुष-ह काहू जीव कौं, वस लागत मति ध्याय<sup>२</sup> ॥६४२॥ पुंन्य न पर-उपगार सम, जो ह्वं करवा जोग्य। पर-पीड़न सम पाप नहि, है यह धर्म मनोग्य ॥६४३॥ भोजन निसि कौं करन तिज, रांधै भी मित कोय। जीव पड़े जामे श्रधिक, मरें सु हिंसा होय ॥६४४॥ फुनि हिंसा के करन के, तजिए सकल उपाय। निज मन वच तन ते वहूरि, श्रीर सुनौं भविराय ॥६४५॥ हिंसा करवो त्यागि फूनि, त्यागि देन उपदेस। वृथा लगै उपदेस तै, ग्रनरथ दंड विसेस ॥६४६॥ सो यह ग्रनरथ दंड कौ, वरनन कहाँ वनाय। गृंथिन के ब्रनुसार ते, सोह तजी सुभाय ॥१४७॥

छंद भुजग प्रयात : कहै एक आछी हवैली वनावो,
कुवा वाग बाड़ी तलाई पुदावो ।
परचौ मेह कीजे अवे क्यों न षेती,
पलैगों कडूवा सर्व नाज सेती ॥६४८॥
भए कापड़ा मेल मैं सो घुपावो,
अवे कातर्चा क्यों न वेगे करावो।
पड़े षाट मैं जीव धूपे नषावो,
परी सीस श्रो वस्त्र में जूं कढावो॥६४६॥

६३६ : १ (म्र) injured २ यह ।

६४२ १ वद्ध। २ द्याय।

१४८: १ A पनावो।

कहें व्याह वेटा' ता्ग वेगि कीजे,

सुता के अवं हाथ पीला करीजे।

तिहारों जु वेरी अवं पासि आयो,

लडी याहि मारो चही चंन पायो ॥६५०॥
वड़ो वृछ है याहि वेगे कटावो,
भले षाट चौकी किवाड़े वनावो।

पड़ची है कजोडा वहारी न दीजे,
भली वावडी ऐक आछी न कीजे ॥६५१॥

तिया कों कहै सीस गुंथाय लीजे,

इन्हें आदि ए सीष काहू न दीजे।

कहों तो कहों दांन पूजा करावो,

करों वास औं देहुरा कों वनावो॥६५२॥

दोहा: मांगे हू दीजे नही, जाते हिंसा होय। तिनहुं के कछू नांम ये, सुनियें लज्जा षोय॥९५३॥

छ'द भुजग प्रयात : मगे देन कों राछ स्राछे वनावे,
करावे प्रससा भले चेन पाये।
हला मूसला ऊंषला देत मागे,
कटारी छुरी षेट वदूक सागे॥६५४॥
कमांगों क्रपांगों कडाही गंडासी,
कुसी चावका , जेवड़ा मूंज फासी।
भले स्रकुसा नांथ झाछी नकेले,
नई पोटली चांम की ले सकेले॥६५५॥
षुरल्ला षुरप्पा विसोले सु नाडी,
तई सांकले डांग घोटा कुहाड़ी।
चकी फाहुड़ा स्रार स्रौ दांतला जे,
वली झागि स्रौ लाकडी ऊपला दे॥६५६॥

६५० १ वेटी।

हेपूर १ वृद्धि । २ परचौ । ३ कजोरा । ४ करीजे ।

हपूर १ इन।

ह्पूर्थ . १ कडाई।

ह्रपूद १ वरसा ।

षिलावे जुंवां भांगि श्राफू तमाषू,
मगी दे मुकररे तियाके भिलाषू।
इने श्रादि संसार मै वस्त हिंसा,
दिएें दोष लागे कहो का प्रसंसा॥६५७॥

दोहा : कहियतु ए षोटे विराज, जिनते उपजै पाप। तो काहे कौं कीजिये, गहि श्रावग की छाप॥६५८॥

छद पदरी :

दारु सावरा मद लोह जाति, तिल लुंग सिघाड़ा चलित कांति। बीघौ श्रन सहत<sup>ा</sup> सु कंद मूल, गुड़ तेल नीलि श्राफू समूल ॥ ६५६॥ म्रादि सर्वे हिंसा प्रकार, व्यौपार तजौ भवि करि विचार। लूख्यो घटिका है राषि मीत, पीछे तवाय<sup>९</sup> लीजे नचीत ॥६६०॥ निज कारिज रौंष हरचौ न काटि, षेती मति करि मति तोलि घाटि। उज्ञाटन श्रौ वसिकरन मंत्र, इन म्रादि म्रौर म्रौषधि क तत्र ॥६६१॥ जिनमै हिसा कौ लगै दोष, सो न करि रही। गहिर के संतोष। पर जीवन कीं दूष कष्ट दे मति तजि म्रारित रौद्र ध्यांनि ॥६६२॥ हिसक जीवनि पालिऐ नांहि, कुत्ता विल्ली बुगवो सताहि । तूती मैनां सिकरा सिचारा, जलकुही वाज चडूल वारा ॥६६३॥

६५६ : १ सहैत।

६६०: १ तवाइ। ६६१: १ A वोषि।

६६२ : १ गृहीं। २ रहि।

६६३: १ सिकरे।